ओ३म्

आर्य समाज स्थापना-शताब्दी के उपलक्ष्य में

वैदिक दर्पण

रचयिता

पं. मुन्नालाल मिश्र

सृष्टि संवत् १९७२९४९०७३, वि. सं. २०३०, दयानन्दाब्द १४९
मार्गशीर्ष शु. ११ गुरुवार, गीता जयन्ती ता. ६-१२-७३ ई.

प्रकाशक :

आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्य दक्षिण
महर्षि दयानन्द मार्ग, हैदराबाद (आं. प्र.)

मूल्य २.५०

सम्मतियाँ

श्री पंडित मुन्नालाल मिश्र आर्यसमाज के तपे तपाये पुराने प्रचारक और कवि हैं। रात दिन आर्य-सिद्धान्तों के प्रचार की धुन सर पर सवार रहती है। इस प्रचार की तन्मयता ने और प्रभु कृपा ने उन्हें कुछ इस प्रकार की विलक्षण क्षमता दी है कि सुधार सम्बन्धी भाव सहज ही पद्य रचना में परिणत होते जाते हैं। मैंने वैदिक दर्पण में उनकी नवीन रचनाओं को देखा है। निश्चय ही इनमें बहुत समर्थ भाषा में सुधार और उत्थान की प्रेरणा दी है। इस सामयिक कृति के लिए श्री मिश्र जी बधाई के पात्र हैं। आर्य जनता को अधिकाधिक इन रचनाओं को युवकों तक पहुँचा कर पण्डित जी के श्रम को सार्थक करना चाहिए।

शिवकुमार शास्त्री
संसत्सदस्य लोकसभा
२८-११-७३

पंडित मुन्नालाल मिश्र अपनी धुन के निराले ही वक्ता प्रचारक और आर्य सिद्धान्तों के मर्मज्ञ हैं। वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार को प्रारम्भ से ही उन्हें इतनी लगन रही है जो गृहस्थ में रहते हुए भी वानप्रस्थ का जीवन ही उन्होंने व्यतीत किया। समाजसेवा और धर्मप्रचार दो ही व्रत उनके प्रमुख रहे।

गुनगुनाना और भावों को काव्य का रूप देना भी प्रारम्भ से ही उनका शौक रहा है। प्रस्तुत वैदिक दर्पण पुस्तक उन्हीं सैद्धान्तिक विचारों का काव्य-मय संग्रह है। भापा से भी अधिक भावों की गहराई में जब पाठक उतरेंगे तो मिश्र जी को अच्छा समझ सकेंगे।

हृदय के निश्छल और विचारों में सुस्पष्ट व्यक्ति प्रकृति से चेतना और प्रसाद गुण लिये होते हैं। मिश्र जी में दोनों बात मैंने देखी हैं। इस संग्रह में भी उनके निजी जीवन की छाप कहीं-कहीं पृथक् दिखाई दे जाती है। आशा है धर्मानुरागी उनकी हृत्तन्त्री से निकली झंकार से अपने को भी झंकृत कर सकेंगे।

नई दिल्ली :
२७ नवम्बर, १९७३

प्रकाशवीर शास्त्री

श्री पं. मुन्नालाल मिश्र आर्य जगत् में एक विशेष स्थान रखते हैं। आप अपनी कविता के माध्यम से निरन्तर चालीस वर्षों से वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार में रत हैं। पण्डित जी ने इस 'दर्पण' के प्रकाशन के पूर्व 'राम चरित्र दर्पण' नामक काव्य का सर्जन कर प्रकाशित किया है, जिसकी सभी विचारों और मतानुयायियों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

आपका यह द्वितीय प्रकाशन 'वैदिक दर्पण' वैदिक धर्म के मान्य सिद्धान्तों के गम्भीर विषय को सरल भाषा में ललित रूप में काव्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करने में समर्थ हुआ है।

पण्डित जी का यह प्रयास श्लाघ्य व साधु वादार्ह है। आशा है सभी सिद्धान्त प्रेमी महानुभाव इस काव्य का हृदय से स्वागत करेंगे।

पं. नरेन्द्र

भूतपूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्य दक्षिण हैदराबाद.

कवि हृदय पण्डित मुन्नालाल जी मिश्र द्वारा रचित 'वैदिक-दर्पण' ऋष्यनुमोदित वैदिक सिद्धान्तों का व्यवहारिक समुच्चय है। यह उनके वर्षों की साधना, सत्यासत्यानुशीलन तथा सत्यग्राहकता का परिणाम है, प्रस्तुत रचना में काव्यात्मकता एवं सिद्धान्तों का सुन्दर समन्वय है। श्री मिश्र जी की यह कृति सिद्धान्त-आदर्श बन कर आदर्श-समाज-निर्माण के साथ जन-जन के सिद्धान्त-परिज्ञान की दिशा में उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसी आशा है।

श्री पं. मुन्नालाल जी मिश्र द्वारा लिखित "वैदिक दर्पण" नामक वैदिक धर्म के त्रैतवाद के सिद्धान्तानुरूप अत्यन्त ही विद्वत्ता परिपूर्ण साहित्यिक पुस्तिका पठन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

श्री मिश्र जी की मर्मस्पर्शी लेखिनी द्वारा लिखित वैदिक सिद्धान्तों को कविता रूप में गाते हुए अनायास ही उलझे हुए प्रश्नों का सामान्य उत्तर प्राप्त हो जाता है।

मैं श्री मिश्र जी के गहन अध्ययन एवं वैदिक सिद्धान्त पर लिखी गई इस रचना की सफलतार्थ परमेश्वर से प्रार्थी हूँ।

इस पुस्तक के स्वाध्याय से देश के करोड़ों लोग प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन को वैदिक धर्मानुसार आचरण कर धर्म लाभ प्राप्त करेंगे। मैं मिश्र जी की सफलतार्थ बधाई देता हूँ।

भवदीय,

राजगुरु शर्मा "विद्यावाचस्पति"

प्रधान

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा

महू (म. प्र.)

मिश्र जी की पुस्तक जब मैंने पढ़ी तो शंका आयी की इनका नाम 'मिश्र' क्यों पड़ा इनका सब काम व्यवहार' असली है तो नाम क्यों मिश्र रखा गया —

इनकी हर पुस्तक सिद्धान्तों से ओतप्रोत रहती है इस पुस्तक में कविता के रूप में वैदिक धर्म के प्रत्येक सिद्धान्त पर इतनी बारीकी से विवेचन किया गया है कि यह एक ही पुस्तक पढ़ ले या साथ रखी जाय तो बहुत सारा साहित्य साथ रख पढ़े जैसा होता है। प्रत्येक वैदिक धर्मी को यह पुस्तक पढ़नी चाहिये और विवाह आदि में भेंट देने के लिये व प्रचार के लिये अधिक संख्या में खरीदनी चाहिये।

शेषराव वाघमारे

अॅडव्होकेट निलंगा,

उपप्रधान, आ. प्र. सभा मध्य दक्षिण

दिनांक १८–११–७३

मान्यवर पण्डित जी के इस वैदिक दर्पण को मैंने एक वार उनसे सुना और एक वार पढ़ा पृ॰ ६१ की निम्न पंक्ति से मेरा मतभेद है।

"मरने वाले पा रहे पाप का फल है" मरने वाला पाप के फल स्वरूप नहीं मारा जाता है अपितु बिना कर्म फल के मारा जाता है, अर्थात् सर्वथा निर्दोष है।

पण्डित जी ने वैदिक सिद्धान्तों को पद्यवद्ध किया है जिसके अध्ययन में नीरसता और शुष्कता समाप्त होकर सरलता वा स्निग्धता का आविर्भाव हुआ है।

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्रच दुर्लभा॥

भर्तृहरि ने लिखा है कि "सुकविता यद्यस्ति राज्येनकिम्" यदि सुन्दर कवित्व है तो राज्य क्या प्रयोजन अर्थात् कवि को जो स्वान्तः सुख प्राप्त होता हैं वह राज्य प्राप्ति से होने वाले सुख से उत्तम है।

पण्डित जी ने अनेक वैदिक निगूढ सिद्धान्तों को अतीव सरल, भाषा में रोचक ढंग से निपुणता से प्रतिपादिक किया है। स्वतन्त्र भारत की वेषभूषा वा मानसिक दासता देशभक्ति शून्यता नैतिक ह्रासोन्मुखस्थिति का मार्मिक हृदयस्पर्शी वर्णन किया है। यह अकाट्य युक्ति व तर्क सुमतों की माला है। सब सज्जन निष्पक्ष होकर इसको पढ़ें विचारें तो निश्चित ही उनके आत्मा में प्रकाश होगा।

ब्रह्मचारी वेदव्रत मीमांसक

शाश्वत सत्य सिद्धान्तों का पद्यमय वैदिक दर्पण जो अब जनता की पहुँच में है बहुत ही गहन विषयों से सरल करके साधारण पढ़े लिखे व्यक्तियों को भी समझ में आने योग्य है। प्रत्येक नागरिक तथा विद्यार्थी के लिये उपयोगी है। इससे प्रत्येक प्रकार की ईश्वर से लेकर साधारण विषय की अच्छी जानकारी हो सकती हैं यदि बार-बार पढ़कर इसमें चर्चित विषयों को स्मृति में रखा जाये।

मैं आशा करता हूँ कि इसे पढ़ कर अन्यों को प्रेरणा करें। जिससे सब को लाभ हो।

आप द्वारा प्रेषित पुस्तक से मैं ही नहीं मेरा सारा परिवार लाभान्वित हो रहा है।

आपका,

वन्देमातरम् रामचन्द्र राव

हैदराबाद (आं. प्र.)

२५ नवम्बर १९७३

ईश-प्रार्थना

जो सत्य तथ्य हो, उसको जाने माने,
आपको और हम अपने को पहचाने।
सद्बुद्धि हमें दे प्रभो, कृपा वह कीजे।
दुर्गुण से भगवन्, दूर हमें कर दीजे ॥

समर्पण

था सदाचार पर चलना ही, जिसका प्रण।
सर्वदा सत्य का किया है, जिसने चित्रण ॥
था नैतिकता का, जिसमें शुभ आकर्षण।
दानवता से जो, सदा रहा करता रण ॥
पर हित में दे डाला, शरीर का कणकण।
संकट में बीते, जिसके सब जीवन क्षण ॥
पद्यमय लिखा है, यह जो "वैदिक दर्पण"।
कर रहा "मिश्र" श्रद्धा से उसे समर्पण ॥



पाठकों से निवेदन :-

रहता रहस्य, प्रत्येक बात के पीछे ।
है छुपा तथ्य, हर एक बात के पीछे ॥
कार्य के रहा करते पीछे कारण है ।
उनको समझें, यह बात न साधारण है ॥
वस्तुएँ बडी छोटी हो, पर उनके भी ।
भण्डार मिलेंगे, हाँ उनके पीछे भी ॥
पर करते हैं जो खोज, वही पाते हैं ।
आलसी स्वार्थी पीछे रह जाते हैं ॥

सबका अपना इतिहास हुआ करता है ।
सबका ही ह्रास विकास हुआ करता है ॥
पर करते हैं अध्ययन-मनन जो मन से ।
पा लेते हैं वे ही उनके जीवन से ॥
सत्य के शोध की लगन रखा करते हैं ।
सत्य का स्वाद भी वही चखा करते हैं ॥
जो मस्त रहा करते खाने पीने में ।
रस मिलत क्या, कहिये उनके जीने में ॥

एकाग्र चित्त से, इन पद्यों को पढ़िये ।
सोचिये! समझिये ! रुकिये, आगे बढ़िये ॥
रुचि ले लेकर, अध्ययन कीजिये मनसे ।
जिज्ञासु स्वयं बन, मनन कीजिये मनसे ॥
मत बात मानिये, आप किसी की तब तक ।
जम जाए नहीं, बुद्धि में अपने जब तक ॥
जब अन्तरात्मा कहे, मान तब लीजे ।
है यही विनय, फिर अस्वीकार न कीजे ॥



यह जगत बना, क्यों बना ? बनाया किसने ?
उद्देश्य रखा क्या ? कहो ! बनाया जिसने ??
उद्देश्य बिना, कुछ कार्य नहीं होता है ।
करना कुछ भी, अनिवार्य नहीं होता है ॥
उद्देश्य और कारण बतलाना होगा ।
तब ही, आगे को, पाँव बढ़ाना होगा ॥

या यों ही यह बन गया, मान हम बैठें ।
बिन कारण ही हो गया, जान हम बैठें ॥
शंका का कहिये ! कैसे वारण होगा ।
जग बनने का, कोई तो कारण होगा ॥

वस्तु के बिना ही, वस्तु नहीं बन पाती ।
बतलाओ हमको, यदि है कहीं बन पाती ॥
सत्तामें होगी, वस्तु बनेगी तब ही ।
प्रत्यक्ष बात है, आप ! जानते सब ही ॥

जो वस्तु रहेगी दूर, निकट वह होगी ।
होगी परोक्ष में वस्तु, प्रकट वह होगी ॥
जो वस्तु नहीं है, वह तो नहीं रहेगी ।
जो है वह तो, बस समझो कहीं रहेगी ॥

जो वस्तु आज है, थी पहले भी निश्चय ।
होगी भविष्य में, रखो न इसमें संशय ॥
रूपान्तर होता इनमें, केवल जानो ।
सत्ता न नष्ठ होती है, यह पहचानो ॥

जिन द्रव्यों में, गुण बसे हुए हैं जो जो ।
सर्वदा साथ, रहते आए हैं वो तो ॥

होते हैं वे तो मात्र प्रकट बस इनमें ।
हम देख रहे, प्रत्यक्ष आज है जिनमें ।।

जिसका स्वरूप आ रहा, दृष्टि में जैसा ।
लीजिये समझ, यह, था पहले भी वैसा ।।
नूतन कोई भी, कार्य नहीं हो पाता ।
जो हुआ, हुआ होता है, वह हो जाता ।।
साधारण जन, यह नहीं समझ पाते हैं ।
और की और ही बात समझ जाते हैं ।।
कहलाता, उनके लिए कार्य नूतन है ।
अज्ञान है उनका. यह सब भोलापन है ।।

यह 'गया' शब्द कह रहा, गया है कोई ।
'आया' का अर्थ है. गया है आया वोही ।।
जो नहीं गया है. वह तो आ न सकेगा ।
जो आया नहीं? कहीं वह जा न सकेगा ।।

धागे से कपड़ा, कपड़ा बना रुई से ।
धागा रखती, अपना संबन्ध सुई से ।।
किससे बन पाई है, यह रुई बताओ ?
थी वस्तु मूल में, छुपी कहाँ? समझाओ! !

जब वस्तु रहेगी, नाम रखा जाएगा ।
बिन वस्तु नाम क्या, कोई रख पाएगा ?
जिसका अभाव है, वह अभाव में होगा ।
जो है स्वभाव में, वह स्वभाव में होगा ।।
परिवर्तन होता सदा वस्तु में जानो ।
निर्भ्रान्ति तथ्य है, सत्य इसे पहचानो ।।

विज्ञान साक्षी, आज दे रहा इसकी ।
कर रहे सिद्ध, सत्ता को हम है जिसकी ।।

यह स्वयंसिद्ध है, जगत मानना होगा ।
इससे ही बातें, सभी जानना होगा ।।
आधार सभी बातों का, यही रहेगा
इसके विरुद्ध क्या ? कोई कहीं कहेगा ?
दृष्टान्त इसी के, सदा काम आएँगे ।
इसके द्वारा ही, सब कुछ समझाएँगे ।।

जग बनता है, इसमें संदेह नहीं है ।
बन जाने की इसमें योग्यता रही है ।।
पर बिना बनाने वाले के, न बनेगा ।
यह स्वयं आप, अपने को बना न लेगा ।।
चेतनता इसमें नहीं, इसी के कारण ।
इच्छित्, स्वरूप कर सकता कभी न धारण ।।
जो जड़ होगा, वह चेतन बन न सकेगा ।
चेतन भी उजड़ता में, न कभी बदलेगा ।।
जिसके जो गुण हैं ? पृथक न हो पाएँगे ।
जड़वत्, चेतनवत्, दिखने में आएँगे ।।

कुछ लोग पूछते हैं, आकरके हम से ।
कर समाधान तुम, हमें निकालो भ्रम से ।।
ईश्वर है तो, फिर आप प्रमाणित करिये ।
प्रत्यक्ष प्रमाण, सामने लाकर धरिये ।

हम बोले तर्क हमें यों समझाता है।
जो होता है, उसको पूछा जाता है ।।
जो है ही नहीं, कौन ? उसको पूछेगा ।
जो नहीं है, उसको, है ही कौन कहेगा ।
है, इसीलिए तो, प्रश्न किया है तुमने ।
मन से तो, उसको मान लिया है तुमने ।।

वे बोले है तो, उसको हमें बताओ ।
बातों में उलझा कर मत गोल फिराओ ।।
आँखों से दिखला दोगे, तो मानेंगे ।
अन्यथा बात, सब है झूठी जानेंगे ।।

हमने पूछा, जो बात कही जाती है ?
क्या बतलाओ ? वह दिखने में आती है ?
जो गंध, नाक से सूँघी जा सकती है ।
क्या यह कहिए ! दिखने में आ सकती है ?
जिव्हा द्वारा, जो स्वाद लिया जाता है ?
क्या स्वाद, तुम्हें वह दिखने में आता है ?
जो वायु, त्वचा को स्पर्श किया करता है !
वह कभी आपको, दर्श दिया करता है ?
क्या जन्म मृत्यु को, कहीं किसी ने देखा ?
जव इन बातों को नहीं किसी ने देखा ?
बिन आँखों देखे, इनको मान रहे हैं ।
सर्वथा सत्य, इन सब को जान रहे हैं ।।
साथ ही आत्मा को देखे बिन जैसे ?
क्यों नहीं मान लेते ईश्वर को वैसे ?

आँखों देखी बातें भी, होती झूठी।
हो जाती है, मत समझो बात अनूठी॥
जादूगर जब, कर अंग भंग दिखलाता।
सब की आँखों द्वारा है देखा जाता॥
पर सभी जानते हैं यह सत्य नहीं है।
आँखों ने, धोखा खाया, तथ्य नहीं है॥
अनुमान प्रमाण न झूठा हो सकता है।
विधि का, सुविधान न झूठा हो सकता है॥

दिख रही सृष्टि में, विविध कलाएँ जो हैं।
अपने महत्व को, दिखा रही हम को हैं॥
इसके पीछे तो, कलाकार भी होगा।
जो इसे रचा वह, समझदार भी होगा॥

इस जग में जो सुविवेक, काम करता है।
सृष्टि का अंग प्रत्येक, काम करता है॥
लो समझ जहाँ पर, सद्‌विवेक रहता है।
है व्यक्ति वहाँ हमको विवेक कहता है॥

मानवी बुद्धि से, बरे काम जो जो हैं।
हो रहे दिख रहे, वे स्पष्ट सबको है॥
होता है यह, अनुमान इन्हीं के द्वारा।
उस छुपे व्यक्ति पर, है विश्वास हमारा॥

हो रहे कार्य सब, विधिवत् ठीक नियम से।
प्रत्येक अंग सब, जुड़े हुए हैं क्रम से॥
कोई निर्माता, छुपा हुआ है निश्चय।
उसके होने में, हमें नहीं है संशय॥

इस सकल विश्व में, प्रकट हुए जो गुण है ।
इनके पीछे तो, कोई व्यक्ति निपुण है ।।
गुण बिना गुणी के, पृथक न रह सकते हैं ।
रह सकते हैं क्या ? कोई कह सकते हैं ।।

क्या बिना विचारे, बने बन गए सारे ।
क्या अनायास बन गए, शरीर हमारे ।।
क्या भरा हुआ, इसमें विज्ञान नहीं है ।
क्या किसी विधाता का, सुविधान नहीं है ।।

ये जीव जगत् में, आते हैं जाते हैं ।
क्यों आते, जाते हैं ? न पता पाते हैं ।
कोई तो होगा, चक्र चलाने वाला ।
आधार जगत का, और बनाने वाला ।।

बनती न वस्तु, कोई भी बिना बनाए ।
जानी जाती है बात, न बिना जनाए ।।
विद्या भी सिखलाने पर ही, आती है ।
किसके द्वारा कहिये ? यह दी जाती है ।।

मिट्टी से वनता घड़ा, बनाने से ही ।
बन सकता वह भी, नहीं आप अपने ही ।।
आटे से रोटी, निश्चय बन जाती है ।
पर मानव के द्वारा ही, बन पाती है ।।

बनने वाला भी, और बनाने वाला ।
समझने और उसको समझाने वाला ।।
ये भिन्न हुआ करते हैं, स्मृति में रखिए ।
बुद्धि से, तर्क से इसको, आप परखिये ।।

क्या बिन नायक के, कभी चरित्र बनेगा ?
क्या चित्रकार के बिन ही, चित्र बनेगा ?
क्या बिना बढ़ाई, बन जाएगा टेबल ?
क्या बिन चिपकाए, चिपक जाएगा लेबल ?
जो बात तर्क पर टिके, मानना चहिये।
हो सत्य उसे ही, सत्य जानना चहिये ॥

× × ×

आकाश, समय, सामग्री के बिन धरती।
यह कभी नहीं, बनपाती नहीं उभरती ॥
साथ ही कल्पना, किये बिना बन जाना।
है सुनो ! असंभव, बात समझ में आना ॥

अब बतलाओ। कल्पना करेगा जो भी।
चैतन्य तत्व ही तो, फिर होगा वो भी ?
जड़तत्वों में, इच्छा न रहा करती है।
कल्पना न, इनमें कभी वहा करती है ॥

× × ×

करिये विचार कुछ बातें हम कहते हैं।
बिन इच्छा के, हम क्यों संकट सहते हैं।
हम जिया चाहते हैं, क्यों मर जाते हैं।
क्यों मरा चाहते हैं—न, मर पाते हैं ?
हो जाती वर्षा, अनायास क्यों सुख की ?
क्यों अनायास, आ जाती घड़ियाँ दुख की ?

जो मनुज चाहता, काम कभी होता है ?
जो नहीं चाहता, काम न भी होता है ?

जो नहीं चाहता, करना, हो जाता है ?
करना चाहे पर; कभी न हो पाता है ?

विजयी होने का, जो प्रयत्न करता है।
मुख देख पराजय का, आहें भरता है ॥
जो एक समय में, मनुज सफल होता है।
दूसरे समय में, सफल न हो रोता है ॥

सोचिये ? रुकावट, कौन डाल देता है ?
है कौन ? काम झट से, निकाल देता है ॥
करिये विचार यह, प्रश्न न साधारण है।
इन सबके पीछे, छुपा हुआ कारण है ॥

× × ×

क्या कारण है ? बस, उसे जानना चहिये।
जम जाए जो, बुद्धि में मानना चहिये ॥

× × ×

यह मानव है, स्वाधीन कर्म करने में।
अर्थात् धर्म करने, अधर्म करने में ॥
पर, परवश है, कर्मों का फल पाने में।
है लाभ, इसी तथ्य को समझ जाने में ॥

है कर्म वाद, यह भोग वाद क्या जानो ?
है तथ्य छुपा क्या ? उसको भी पहचानो ॥
प्रत्यक्ष, नहीं वह दिखने में आता है।
अनुमान किये पर, पहचाना जाता है ॥

× × ×

जड़ तत्वों के, आपस में मिल जाने पर।
उत्पन्न, जीव हो जाते हैं, यो कह कर ॥
संतोष कर लिया करते हैं, कुछ सज्जन।
इनका विज्ञान, न करता कभी समर्थन ॥

जड़ से जड़ मिल कर, जड़ ही रह पाएगा।
कैसे अभाव में भाव भला आएगा ?
चेतनता, जड़ता, गुण है विरोधी रखते।
एक ही द्रव्य में, दो न कभी हो सकते ॥

अदृश्य गुणी का, गुण आधार रहा है।
गुण से उसका, हो साक्षात्कार रहा ॥
गुण भिन्न-भिन्न, इन भिन्न-भिन्न गुणियों का।
करवाता भान, है कहना ऋषि मुनियों का ॥

सत्ता स्वतंत्र, जीवों की नहीं कहे पर।
कितने ही, प्रश्नों के न मिलेंगे उत्तर ॥
सिद्धान्त आपका, अपूर्ण रह जाएगा।
किंचित भी, फिर तो पाँव न बढ़ पाएगा ॥

इन जीवों का, अस्तित्व मान कर चलिये।
इनके गुणकर्म, स्वभाव जान कर चलिये ॥
तब छुपा हुआ, ईश्वर भी दिख जाएगा।
जो भी रहस्य है सन्मुख खुल आएगा ॥

जो नहीं जीव को, अमर मान चलते हैं ?
ईश्वर ने पैदा किया जान चलते हैं ??
हम उन्हें पूछते हैं, क्यों किया बताओ ?
क्या कारण था, उस कारण को समझाओ ??

कारण को तो ये नहीं बता पाते हैं ?
शब्दों की बस, रचना करते जाते हैं ॥
क्या पहले से, रचना करता आया है।
या वर्तमान में ही कर दिखलाया है ?

क्या भविष्य में भी, करता सदा रहेगा ?
या रचना करना कभी बन्द कर देगा ??
इसका उत्तर भी, हम ही दे सकते हैं।
लेना चाहे वह, हमसे ले सकते हैं ??

× × ×

देने वाले ने हमें देह, क्यो दी है।
यह कृपा हमारे पर, कहिये क्यों की है ॥
देता न हमें, यह देह हानि क्या होती।
बतलाओ हमको, आप खोल कर पोथी ॥

क्या भूतकाल में भी, हमको यह दी थी।
जो कृपा आज की, क्या पहले भी की थी ॥
क्या भविष्य में भी, हमको दी जाएगी।
जो कृपा आज की, फिर भी की जाएगी ॥

यदि बुद्धि आपकी, ठीक ठिकाने पर है।
तो दिया चाहिए, इसका भी उत्तर है ॥
इसका उत्तर भी, हम ही दे सकते हैं।
लेना चाहे वे, हमसे ले सकते हैं ॥

नास्तिक, कर्ता को, नहीं मान देते हैं ?
हाँ, वस्तु क्रिया को, सदा स्थान देते हैं ॥
जो दीख रहा संसार जानते उसको।
अदृश्य है जो भी, नहीं मानते उसको ॥

कुछ आस्तिक, ईश्वर को माना करते हैं ?
पर इस जग को, झूठा जाना करते हैं ?
प्रत्यक्ष जगत को नहीं मान देते हैं ।
केवल ईश्वर को, सदा स्थान देते हैं ॥

दोनों जो अस्वीकार, किया करते हैं ।
आचरणों में, व्यवहार किया करते है ॥
जीवों को, जग को, और जगत के पति को ?
लो मान, मान लो ? मेरी इस सम्मति को ॥

प्रत्येक समस्या का, हल हो जाएगा ।
तीनों को माने, प्रश्न न रह पाएगा ।
बिन माने, आगे कभी न बढ़ पाओगे ।
माने पर ही, आगे बढ़ते जाओगे ॥

होती न प्रकृति, संसार नहीं बन पाता ।
होते न जीव, किस लिए बनाया जाता ॥
ये दोनों होते, पर ईश्वर ना होता ?
फिर बतलाओ! क्यों? कार्य कहाँ क्या होता?

आवश्यकता की, होती मार जभी है ।
हो पाते समझो ! आविष्कार तभी है ॥
कारण होगा तब ही कर्ता के द्वारा ।
कुछ हो पाएगा ? है विश्वास हमारा ॥

क्या यह ईश्वर के लिए बनी है धरती
क्या धरती, रचना लिए स्वयं के करती ?
अल्पज्ञ जीव के लिए, बनी धरती है ।
इसके अभाव की, पूर्ति सदा करती है ॥

खाने वाले के लिए, अन्न वनता है।
नित क्षुधा पूर्ति, करती भूखी जनता है।
यह अन्न बना है लिए नहीं ईश्वर के।
यह जग क्या? लिए वना है जगदीश्वर के ॥

लो मान, न उसने जगत वनाया होता ?
जिस भाँति रचा, यह नहीं रचाया होता ?
तो हानि वताओ! उसकी क्या? हो पाती।
निश्चय ही उन्नति जीवों की रुक जाती ॥

परिपूर्ण ज्ञान में, कहलाता है ईश्वर।
अज्ञान पूर्ण है, रहा प्रकृति का तो स्तर ॥
आवश्यकता से, सदा परे है ये तो ?
प्रत्यक्ष, स्पष्ट है, वात कोई समझे तो ॥

अल्पज्ञ जीव के, कारण ही ईश्वर ने
प्रकृति से बनाया, जग को जगदीश्वर ने
सच्चिदानंद वह, ईश्वर कहलाता है।
सत् चित् जीवों के लिए नाम आता है ॥

सत् दिया नाम प्रकृति को, ध्यान में रखिये।
इन तीनों को ही, अच्छी तरह परखिये।
वेदों ने, ईश्वर को सर्वज्ञ बताया।
अल्पज्ञ नाम, जीवों के लिए है आया,

है अज्ञ प्रकृति, स्मृति में सदा रख लीजे।
यह बात, ध्यान में रख, विवेचना कीजे।
ऐसा करने पर भूल न हो पाएगी।
फिर बात कोई, प्रतिकूल न हो पाएगी ॥

ईश्वर व प्रकृति, ये जीव बिना कारण है।
यह ही उत्तर, करता क्यों का वारण है।
जो अमिट रहेगी, सत्ता, वह बिन कारण।
है बात समझ में आने की साधारण॥
जो कार्य है होता, होता उसका कारण।
है बात समझ लीजे, यह भी साधारण॥

जिस जिसका जिसमें, गुण है बिन कारण है।
गुण सदा, गुणी करके रखता धारण है॥
गुण प्रकट किया जाता, कारण आने पर।
आती है समझ में बातें समझाने पर॥

क्यों कार्य किया? यह बतलाओ तो किसने।
फिर किया है, किसके लिए? किया है जिसने॥
इसका उत्तर, केवल हम दे सकते हैं।
अन्यों से, उत्तर आप, न ले सकते हैं॥

जीवों की सत्ता, नहीं मानते जो हैं।
बन गया जीव, ईश्वर ही कहते वो है॥
क्यों बना? न उत्तर, इसका दे पाते हैं?
लंबा चौड़ा भाषण तो दे जाते हैं॥

सर्वज्ञ बनेगा? क्यों अल्पज्ञ बताओ।
क्यों दीन बनेगा? शक्तिमान समझाओ॥
अपने में क्यों यों परिवर्तन लाएगा।
क्यों जन्म मृत्यु के, फन्दे में आएगा॥

क्यों बार बार जन्मेगा, और मरेगा।
कैसे क्यों फिर, अपना उद्धार करेगा॥
बंधन में आकर पुनः मुक्ति पाएगा।
कहिये, यह धन्दा, करने क्यों जाएगा॥

परिपूर्ण आप जब ईश्वर को कहते हो।
कहते, इच्छा से रहित सदा रहते हो॥
वह सदा एक रसमें, रहने वाला है।
हो घनानंद क्या? दुख सहने वाला है॥

माया को, झूठी सदा मानते तुम हो।
अस्तित्व नहीं, उसका बखानते तुम हो।
अस्तित्व हीन, माया के वश में ईश्वर।
हो गया? और फिर, कहलाया जगदीश्वर?

निश्चय अभाव में, होता भाव नहीं है?
क्या? कहो! आपका यह प्रस्ताव नहीं है॥
कैसे अभाव से, यह संसार बना है।
जिसको कहते हो आप, निरा सपना है॥

सपना भी तो, सच्ची घटना के द्वारा?
आता है वह भी, सच का लिए सहारा॥
प्रत्यक्ष बात का ही, सपना आता है।
सपना भी तो सच सपना कहलाता है॥

अन्धे को सपना कभी नहीं आता है।
वह क्योंकि नहीं, प्रत्यक्ष देख पाता है॥
वास्तविक वस्तु का ही, तो भ्रम होता है।
भ्रम के पीछे भी, उसका क्रम होता है॥
कल्पना सत्य की ही होती आई है।
सच्ची घटना ही, देती दिखलाई है॥

× × ×

घट होंगे? घट में, जल जब भरा रहेगा।
प्रतिबिंब सूर्य का, उसमें तभी गिरेगा॥

जब घट, जल सूरज को ही, भ्रम मानोगे ।
दृष्टान्त पुनः किसका देना ठानोगे ।।

जब बना हुआ, संसार मात्र यह भ्रम है ।
इस जग का सब व्यवहार, मात्र यह भ्रम है ।।
फिर तो भ्रम है ? इन वचनों का भी कहना ।
साथ ही आपका, इस जग में भी रहना ।।

इस जग को, झूठा जिस मुख से कहते हो ।
दृष्टान्त उसी के, तुम देते रहते हो ।।
क्यों ईश्वर की सत्ता को इसके द्वारा ।
करते रहते हो, सिद्ध, न कभी विचारा ।।

धरती पर रह कर, सदा आप पलते हो ।
खा कर इसका ही अन्न, आप चलते हो ।।
फिर भी सत्ता, स्वीकार नहीं करते हो ।
तुम ! यथायोग्य व्यवहार नहीं करते हो ।।

रस्सी को समझा साँप, साँप को रस्सी ।
लस्सी को समझा चाय, चाय को लस्सी ।।
क्या ? दोनों का अस्तित्व, नहीं मानोगे ।।
क्या इन दोनों को, मिथ्या ही जानोगे ।।

मुन्ना को पन्नालाल, जान हम बैठे ।
भ्रम के कारण, विपरीत मान हम बैठे ।।
क्या दोनों को, स्वीकार न करना होगा ।
क्या यथायोग्य व्यवहार न करना होगा ।।

अस्तित्व रहे पर, नाम रखा जाता है ।
अस्तित्व बिना तो, नाम न रह पाता है ।।
जो है वह तो, निश्चय ही नष्ट न होगा ।
जो नहीं, है वह, प्रत्यक्ष व स्पष्ट न होगा ।।

यह माया गुण है ? या है, द्रव्य बताओ।
कुछ भलीभाँति से, लक्षण कर समझाओ ।।
अपने में क्या यह, कुछ विवेक रखती है ?
चेतन है अथवा, यह जड़ हो सकती है ?
माया गुण है ? या द्रव्य हमें समझा दो।
साकार है, या है, निराकार दिखला दो ।।
क्या ईश्वर के, आधीन रहा करती है ?
या ईश्वर को, आधीन रखा करती है ?
क्या ईश्वर से है, प्रबल या कि निर्बल है।
चंचल है, अथवा बतलाओ निश्चल है ।।

मायापति होगा, तब ही माया होगी।
जब धूप रहेगी, तो ही छाया होगी ।।
ऐश्वर्य रहेगा, तो ही ईश्वर होगा।
नारी होगी, तब ही कोई नर होगा ।।
अन्य के रहे पर, तुलना कर तो लोगे।
छोटा न रहे पर, बड़ा किसे बोलोगे ।।
होगा विकार, तब निर्विकार भी होगा।
साकार रहे पर, निराकार भी होगा ।।
नौकर होगा, तब कहलाएगा स्वामी।
अन्तर होगा तब, होगा अन्तर्यामी ।।

इन सबको, अस्वीकार करोगे कैसे।
सब सांसारिक, व्यवहार करोगे कैसे ।।
जग कहता है, मैं हूँ प्रमाण ईश्वर का।
होता है भान, मुझसे महान ईश्वर का ।।
है वह मेरा आधार, किन्तु सच जानो ?
हूँ मैं उसका आधार, बात पहचानो ।।

जीवों का भी, आधार जान लो मैं हूँ ।
कर भली प्रकार, विचार मान लो मैं हूँ ।।
योनियाँ मिली है, ये जो तुम सबको भी ।
मुझ बिन मिलती क्या, मिल पाई है जो भी ।।

× × ×

सर्व व्यापक है, आप जानते उसको ।
जिसमें व्यापक है, नहीं मानते उसको ।।
संतोषजनक, उत्तर न आप देते हो ?
शब्दों की केवल, रचना कर लेते हो ।।
मकड़ी का तुम, दृष्टान्त दिया करते हो ।
उसके जाले का, नाम लिया करते हो ।।
दो तत्व, काम उसमें भी तो करते हैं ।
कारण भी, उसमें छुपा है, क्यों करते है ।।

अपने बचाव के लिए, बिचारी मकड़ी ।
जाले का कर विस्तार सहारा पकड़ी ।।
पर ईश्वर ने, किस कारण जगत बनाया ।
वह बिना प्रकृति के, कैसे ? यह कर पाया ।।

× × ×

भीतर बाहर, सर्व व्यापक है ईश्वर ।
पर्दा उस पर, पड़ ही सकता है क्यों कर ।।
अन्तर्यामी, फिर कैसे कहलाएगा ?
फिर शक्तिमान भी, कैसे रह पाएगा ।।

निज इच्छा से, पर्दा डाला ईश्वर ने ।
या, माया ने, डाला, यह रचना करने ?
यह कथन आपका, नहीं समझ में आया ।
कैसा ईश्वर है कैसी है यह माया ।।

× × ×

जब ब्रह्म जीव को एक मान चलते हो।
क्यों अवतारों को, दिए स्थान चलते हो ॥
जग को मिथ्या, कह कर भी दर्शाते हो।
प्रतिमा की पूजा, करते भी जाते हो ॥

तुम कहे हुए, निज वचनों से टलते हो।
फिर इसे विरोधाभास, बोल छलते हो ॥
आता न समझ में यह सिद्धान्त तुम्हारा।
मत नहीं दिखाता, यह निर्भ्रान्त तुम्हारा ॥

जादूगर कृत्रिम रस्सी पर चढ़ता है।
दिखता है सबको वह आगे बढ़ता है ॥
वह रस्सी है कृत्रिम, वास्तविक नहीं है।
इस भाँति जगत भी समझो नहीं सही है।

यों कहने वालों से है, प्रश्न हमारा।
उत्तर दो हमको काटो नहीं किनारा ॥
कृत्रिम रस्सी ही है प्रमाण असली का।
असली ही है प्रमाण नकली का ॥

जग को अस्थिर, कहना यह बात सही है।
पर मिथ्या कहना, यह तो सत्य नहीं है ॥
मिथ्या मानें से, हानि हुई है कितनी।
है कठिन बताना, यह कि हुई है इतनी ॥

शत्रु ने आक्रमण किया, कहा यों हमने।
डलवाये हमसे शस्त्र इसी ही भ्रम ने ॥
क्यों मिथ्या जग के लिए, लड़ाई करना।
निश्चय ही है, जब हमें एक दिन मरना ॥

× × ×

आस्तिक, कहलाने की है चाह सभी को।
उसको पाने का, हैं उत्साह सभी को॥
पर उचित ढंग से, खोज नहीं करते हैं।
चर्चा उसकी, हर रोज नहीं करते हैं।
सच्चे मन से तो, करते चाह नहीं है।
है कैसा ? वह, इसको परवाह नहीं है॥

सच्चे स्वरूप की ओर न ये जाएँगे।
अपने मन से, ये घड़ कर बैठाएँगे।
मन वहलाने के ही, जुटाएँगे साधन।
बस उसे समझ लेंगे, ईश्वर अराधन॥

को ये तोलेंगे, अपने बट से।
साथ ही उसे, पाना चाहेंगे झट से॥
सोचा चाहेंगे नहीं बुद्धिमत्ता से।
ये खेल करेंगे, उस महान सत्ता से।

सर्वज्ञ है कह, ताले में बन्द करेंगे।
विपरीत कार्य होकर मति मंद करेंगे॥
विपरीत भाव के, सही भाव जानेंगे।
जो है असत्य, ये उसे सत्य मानेंगे॥

× × ×

प्रतिमा को, ईश्वर से मिलने का साधन।
कह, नित्य करेंगे, साध्य समझ आराधन॥
मिल गया हमें भगवान, समझ यों लेंगे।
इसके आगे ये पाँव न कभी धरेंगे॥

प्रतिमा को, पहली सीढ़ी बतलाएँगे।
उस सीढ़ी से, ऊपर न कभी जाएँगे॥

उस सीढ़ी पर होकर, निश्चित रुकेंगे ।
उद्देश्य पूर्ति की ओर, न कभी झुकेंगे ।।

× × ×

उस ईश्वर को ये, निर्विकार मानेंगे ।
साथ ही विकारों वाला भी, जानेंगे ।।
है जन्म मृत्यु से परे कहेंगे उसको ।
दे जन्म मारते सदा रहेंगे उसको ।।

हैं सदा एक रस, उसको वतलाएँगे ।
फिर भी उसमें, नित परिवर्तन लाएँगे ।।
हैं शुद्ध बुद्ध आनंद रूप बोलेंगे ।
पर, उसको, ये अपने वट से तोलेंगे ।।

सर्व व्यापक भी, वतलाएँगे उसको ।
एक ही स्थान पर, बैठाएँगे उसको ।।
प्रकृति से परे हैं, उसको नित्य कहेंगे ।
उसको शरीर भी देते सदा रहेंगे ।।

मन माना उसको नाच नचाएँगे भी ।
है सदा एक रस उसे बताएँगे भी ।।
उसको असीम कह, सीमा में बाँधेंगे ।
ताना वाना अपने मन का तानेंगे ।।

है परिवर्तन से रहित बोलकर फिर भी ।
इस, कही वात पर नहीं रहेंगे स्थिर भी ।।
ईश्वर होकर भी हीन काम करता है ।
छल भी करता है, वैरी से डरता है ।।

हमने पूछा, क्यों यो कर दिखलाता है।
तो कहते हैं, वह लीला बतलाता है॥
हमने, यों कहा कि हम भी जगदीश्वर हैं।
हैं सर्व शक्ति सम्पन्न व विश्वंभर है॥

तब कहा उन्होंने, दुख क्यों तुम पाते हैं।
हमने यों कहा कि लीला दिखलाते हैं॥
बोले वे, क्यों असफल हो पछताते हैं।
हमने यों कहा कि लीला दिखलाते हैं॥

रोते क्यों कभी, कभी क्यों हर्षाते हैं।
हमने यों कहा कि लीला दिखलाते हैं॥
क्यों बिना सवारी पैदल ही जाते हैं।
हमने यों कहा कि लीला दिखलाते हैं॥

× × ×

ईश्वर को कह कर एक, अनेक कहेंगे।
करते विरोध वचनों में, सदा रहेंगे॥
ब्रह्मा, शिव शंकर, विष्णु सभी ईश्वर हैं।
फिर पृथक पृथक पत्नियाँ है, इनके घर हैं॥

वह विष्णु रहा करते हैं, क्षीर सागर में।
औ ब्रह्म लोक में, ब्रह्मा अपने घर में॥
शिव रहते हैं कैलाश हिमालय में जा।
जिसको, जो चाहा स्थान दिया औ भेजा॥

कोई है चौथा आसमान बतलाता।
सातवाँ आसमाँ, कोई है समझाता॥
उसको, असीम भी कह कर बतलाते हैं।
सच्चाई का दावा करते जाते हैं॥

प्रत्यक्ष सूर्य भण्डार, अग्नि का जो है।
देता प्रकाश, जो दीख रहा सबको है॥
इसको, अपना सा, पुरुष जान चलते हैं।
नदियों को नारी, नित्य मान चलते हैं॥

शनि, शुक्र बृहस्पति, जो है ग्रह कहलाते।
इनको, चैतन्य समझ कर है पुज जाते॥
है अलंकार उसको इतिहास बताते।
पूछे पर, है अपना विश्वास बताते॥

जिनके पीछे, कुछ भी आधार नहीं है।
उनका भी ये, करते प्रतिकार नहीं है॥

ईश्वर जीवों का ज्ञान है, गुण कहलाता।
आकाश शब्द गुण है, प्रत्यक्ष दिखाता॥
है स्पर्श वायु का, तेज अग्नि का जानो।
जल का गुण रस है, इसे आप पहचानो॥
मृतिका का गुण है, गंध ध्यान में रखिए।
इन पाँचों को, पाँचों से आप परखिए॥

यह गन्ध नाक से सूँघा जा सकता है।
रस जिव्हा द्वारा जाना जा सकता है॥
तेजौ प्रकाश को, आँख जान पाती है।
यह त्वचा वायु को, तुरत जान जाती है॥
यह कान शब्द की, ध्वनि को है सुन लेते।
ये पाँचों हैं, जीव को सूचना देते॥

पाँचों न पास ईश्वर के जा सकते हैं।
सम्पर्क जोड़ने, काम न आ सकते हैं॥

हाँ ये पाँचों साधन तो बन सकते हैं।
इतनी क्षमता तो, निश्चय ही रखते हैं॥
ईश्वर को केवल जीव जान सकता है।
यह क्योंकि स्वयं में, चेतनता रखता है॥

× × ×

जो अलंकार वेदों ने है बतलाया।
इस मानव ने, उल्टा ही अर्थ लगाया॥
हो गया इसी कारण, गड़बड़ घोटाला।
जब ठीक न समझाया, समझाने वाला॥

गौणिक बातों का अर्थ समझ कर चलिए।
जिसका न अर्थ हो, व्यर्थ समझकर चलिए॥
जो नहीं तर्क पर टिके, ध्यान मत दीजे।
आवश्यकता से अधिक स्थान मत दीजे॥

सूरज के रथ में, सात अश्व रहते हैं।
ये अश्व समझ लों! घोड़ों को कहते हैं॥
रथ के आगे, किरणें दौड़ा करती हैं।
इनके द्वारा पाती प्रकाश धरती है॥

सूरज को मानव, मान लिया मानव ने।
घोड़ों को, घोड़े, जान लिया मानव ने॥
बन गया, मूर्ख, औरों को मूर्ख बनाया।
था तात्पर्य उसको, न समझने पाया॥

सूरज को कहते इन्द्र, इन्द्र के द्वारा।
होती है वर्षा, जगत् जानता सारा॥
हम जैसा होगा? इन्द्र जान यह बैठा।
है इन्द्र लोक भी कहीं? मान यह बैठा॥

सूरज को ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र कहते हैं।
आधार गुणों का लिए, नाम रहते हैं॥
गौणिक नामों का जो रहस्य है जानो।
गौणिक कहानियों को, इतिहास न मानो॥

ईश्वर अनंत शिर, हाथ पाँव वाला है।
वेदों ने, ऐसे ? क्यों यों ? कह डाला है॥
वास्तविक अर्थ क्या है ? तुम पता चलाओ।
मत हाथ पाँव, अपने से उसे लगाओ॥

क्या ? हम जैसा ही वह शिर वाला होगा ?
क्या हम जैसा ही, गोरा काला होगा ?
है परिवर्तन से रहित, मानते चलिये।
अनुकूल अर्थ करके, वखानते चलिए॥

भारत माता क्या ? सचमुच ही नारी है ?
यह चित्रकार की मात्र चित्रकारी है॥
इसको समझो जो भाव छुपा रहता है।
अपनी भाषा में, रूपक जो कहता है॥

सेनापति के, बतलाओ ? शिर कितने हैं
उत्तर में कह दीजे, सैनिक जितने हैं ?
है उनसे दुगने हाथ, ठीक बतलादो।
उतने ही कह दो पाँव, बात समझादो॥

लक्ष्मी का वाहन, उल्लू कहलाता है।
क्यों कहो ! विष्णु, लक्ष्मी पति बन जाता है॥
ये दोनों ही क्या ? पुरुष और नारी हैं।
हम तुम जैसे, क्या ? ये भी संसारी हैं॥

क्या ? उल्लू पर हो सकती कहीं सवारी।
लक्ष्मी को यह क्यों लगी, सवारी प्यारी ॥
क्यों ? नहीं कहो ! हाथी घोड़ा मनभाया।
क्यों फिर उल्लू को ? वाहन कहो ! बनाया ॥

उल्लू वे हैं, धन है ? पर ? महा कृपण है।
है विष्णु वही धर्म में, लुटाते धन है ॥
इस अलंकार को, ठीक समझकर चलिये।
ना समझी से, मत व्यर्थ उलझकर चलिये ॥

क्यों सरस्वती का वाहन हंस कहता ?
क्या है समझो, इन दोनों का यह नाता ॥
ज्यों हंस सदा ही मोती चुन लेता है।
विद्वान सदा, अवगुण तज गुण लेता है ॥

क्यों सिंह शक्ति का वाहन कहलाता है।
क्या ? तात्पर्य इसका समझा जाता है ॥
जो शक्तिमान होते, वे दुष्ट जनों को।
वश में रखते आए हैं, कुपित मनों को ॥

भारत की धरती, माँ जो कहलाती है।
पालन हम सबका करके दिखलाती है ॥
सृष्टि के आदि में, जन्म हमें देती है।
इस कारण से, माता का पद लेती है ॥

शंकर के शिर पर, चन्द्र रहा करता है।
प्राय: मानव यह बात कहा करता है ॥
जो जटा है, उसमें गंगा भी रहती है।
वह गंगा ही इस धरती पर बहती है ॥

तीसरा नेत्र भी है, ललाट के ऊपर।
क्या ? ऐसा मानव, हो सकता है भूपर ?
इस रूपक का, भावार्थ समझ लेने पर।
समझा जाता है तथ्य, ध्यान देने पर ॥

मानव की, आकृति, सन्मुख रख ईश्वर को।
कल्पना करो ! समझो, उस जगदीश्वर को ॥
वेदों ने करवाया, विराट का दर्शन।
है भरा हुआ जिसमें, उत्तम आकर्षण ॥

इतिहास समझ लेने की भूल न करिये।
भावार्थ, भूल कर भी प्रतिकूल न करिये ॥
है निश्चित, उसका रूप, न उसको बदलो।
जो है रहस्य, बस उसको आप समझ लो ॥

ऊपर शिर, नीचे पाँव जान कर चलिये।
वृक्षादि रोम है, आप मा । कर चलिये ॥
उसकी आँखें हैं, सूर्य चन्द्र को जानो।
श्वासा है उसकी, वायु, बात पहचानो ॥

है दशों दिशाएँ, उनको हाथ समझिए।
यह विजली जो है, उसको दाँत समझिये ॥
आजू बाजू का भाग, कान है मानो।
काले बादल है, इन्हें जटा है जानो ॥

उसकी वाणी, लो समझ वेद वाणी है।
उसके शरीर में, वसते सब प्राणी हैं ॥
नदियाँ, नाले, एवं समुद्र ये जो हैं ?
उदरस्थ भाग, लो समझ आप उसको है ॥

है नैसर्गिक विज्ञान वेद में सारा ।
है यह विश्वास, हमारा और तुम्हारा ।।
नक्षत्र जगत का भी है हाल बताया ।
इन सबको समझा, उसने लाभ उठाया ।।

गिरजा ने सुत मैल का बनाया कैसे ।
चैतन्य, जीव, उसमें फिर आया कैसे ।।
क्या गिरजा, वह, प्रतिदिवश नहीं न्हाती थी ?
पहरे पर, प्रतिदिन किसको ? बैठाती थी ।।

शंकरजी ने, जब, जाना चाहा घर में ।
बालक ने रोका, जा न सके भीतर में ।।
आगया, क्रोध, झट से उतार दी गर्दन ।
गिरजा का फिर तो, मान होगया मर्दन ।।

क्या ऐसा करना, शिव के लिए उचित था ।
या उसकी लेते मान, इसी में हित था ।।
आवेश, रोष में, बिन सोंचे ही आना ।
क्या थी विवेक की बात हमें समझाना ।।

जब पता चला, गिरजा को, बोली ऐसे ।
वह मेरा सुत था, तुमने मारा कैसे ।।
इस मरे हुए को, जीवित करना होगा ।
इसके धड़ पर शिर, लाकर धरना होगा ।।

शंकर को शिर का, पता नहीं चल पाया ।
फिर सर्व-व्यापक, शिव कैसे कहलाया ?
कहते हैं, हाथी का शिर धड़ पर जोड़ा ।।
कैसे जोड़ा, समझाएँ, कोई थोड़ा ।।

हाथी का शिर, उस बालक की गर्दन पर ।
जोड़ा कैसे, जुड़ सकता भी है क्यों कर ॥
साथ ही सूँड की, लम्बाई बतलाओ ।
धड़ की लंबाई, को समझो ! समझाओ ॥

शिर लेकर बालक कैसे चलता होगा ।
बतलाएँ कोई ? ऐसे चलता होगा ॥
फिर रक्तभेद भी दोनों में रहता है ।
यह शारीरिक, विज्ञान, हमें कहता है ॥

यह बात कहो ! माने तो कैसे माने ।
इस घटना को सच्ची हम कैसे जाने ॥
इतना लंबा, चौड़ा शरीर यह भारी ।
चूहे पर कैसे करता कहो सवारी ॥

× × ×

दिति, और आदितिने, जन्म दिया किन-किन को ।
विवरण सुनिये वे प्रकटाई जिन - जिन को ॥
सुर असुर और पक्षियों तथा पशुओं को ॥
वन वृक्ष, पहाड़ों औ समुद्र नदियों को ।

× × ×

क्या साठ सहस्र, पुत्र नारी के द्वारा ।
एक ही साथ होते क्या कभी विचारा ॥
वतलाओं तो यह गप्प नहीं तो क्या है ।
पर लोगों ने तो, इसे सत्य समझा है ॥

× × ×

दश शीश बीस थे हाथ, सुना था अबतक ।
यह बात पहुँचने पाई थी हम सबतक ।।
अद्भुत रामायण में सहस्र शिर वाला ।
रावण का, बतलाया है, रूप निराला ।।

उसका वध, सीताजी से करवाया है ।
राम से अधिक, सीता को बतलाया है ।।
ब्रह्म से अधिक, शक्ति को महत्व दे डाला ।
था व्यक्ति शाक्त-रामायण लिखने वाला ।।

× × ×

कहते सहस्त्र थे हाथ सहस्रार्जुन के ।
जो परशुराम ने, काटे थे, चुन-चुन के ।
क्या बात समझ में, यह भी आ सकती है ।
दे उदाहरण, समझाई, जा सकती है ।।

वरदान कहें ? या यह अभिशाप बताओ ।
बुद्धि में बिठाकर बात हमें समझाओ ।।
ऐसे शरीर धारी क्या हो सकते हैं ।
होने पर क्या वह सुख से सो सकते हैं ।।

× × ×

क्या गंगा नारी बनकर आ सकती है ।
उत्पन्न पुत्र करके दिखला सकती है ।।
क्या सूर्य रूप, मानव का धर सकता है ।
उत्पन्न पुत्र नारी से कर सकता है ।।

× × ×

क्या अग्निकुण्ड, नारी पैदा कर देगा।
क्या अग्नि देवबन. स्वयं पुरुष प्रगटेगा॥

× × ×

क्या वायु किसी नारी से संग करेगा।
मानव बन कर क्या कभी कहीं विचरेगा॥

× × ×

क्या नाक कान से हो सकते हैं? बच्चे।
क्या लिखे हुए ये लेख रहेंगे सच्चे॥
क्या धरती गौ का रूप बना सकती है।
क्या बात बुद्धि में यह भी आ सकती है।

× × ×

क्या पहले पशुगण बात किया करते थे।
मानव जैसे क्या समझ लिया करते थे॥
क्या मानव पशु बनकर दिखला सकता था।
क्या सृष्टि नियम के विरुद्ध जा सकता था॥

× × ×

तेंतीस कोटि, देवों को बतलाते हैं।
ये सूक्ष्म रूप में, आते हैं जाते हैं॥
ये भूत काल में, सशरीर आते थे।
खाते, पीते, रहते व लौट जाते थे॥

पत्नियाँ है पर होती संतान नहीं है।
वास्तविक तथ्य पर इनका ध्यान नहीं है॥
इस भाँति कई विश्वास लिए बैठे हैं।
मनमानी यों कल्पना किये बैठे हैं॥

ये एक दूसरे को, झूठा कहते हैं।
ये एक दूसरे से, लड़ते रहते हैं।
ये अपने मत को, समझ चलेंगे पूरा।
वास्तविक दृष्टि में, चाहे रहे अधूरा॥

ये जो-जो भी, बातें प्रस्तुत करते हैं।
जीवित, न, कोई सन्मुख प्रमाण धरते हैं॥
बस कहते हैं, करिये विश्वास हमारा।
हो जाएगा, निश्चय ही भला तुम्हारा॥

विज्ञान तर्क को, देते स्थान नहीं हैं।
निर्भ्रान्ति सत्य को, देते मान नहीं है॥

× × ×

जो कोई भी, विद्वान हुआ करते हैं?
जीवन में कुछ करजाकर, जो मरते हैं॥
उनकी प्रतिमा को, मन्दिर में बैठाते।
सर्वेश्वर उनको समझ पूजने जाते॥
तेंतीस कोटि हैं, इनके पहले के ही।
फिर नये कई आए, धारण कर देही॥

उनकी पूजा में, सदा मस्त रहते हैं।
आनन्द उड़ाते, और व्यस्त रहते हैं॥

× × ×

जड़ है उसको, चैतन्य समझ चलते हैं।
है अज्ञ उसे, सर्वज्ञ बता छलते हैं॥
यह बतलाओ, अन्याय नहीं तो क्या है?
यह सब, उल्टा व्यवसाय, नहीं तो क्या है??
मानव के द्वारा, जिसे बनाया जाता।
उसको कहते हो, तुम, जग का निर्माता॥

यह बतलाओ ! क्या मिथ्या ज्ञान नहीं है ?
क्या यह असत्य को, देना स्थान नहीं है ।।

× × ×

जिसके आगे तुम, भोग रखा करते हो ।
वह खाता है या ? आप ! चखा करते हो ?
रखते प्रसाद हो, सन्मुख बालाजी के ।
पर मुख में, यह जाता है, लालाजी के ।।
अन्यों को, अपने को, धोखा देते हो ।
झूठी बातों को, सत्य समझ लेते हो ।।

× × ×

अवतार वाद का, लेकर सदा सहारा ।
ईश्वर बनकर, करते हैं कई पुकारा ।।
इस वर्तमान में, कई चोर निकले हैं ।
ईश्वर कहकर और के और निकले हैं ।।
भोली जनता ही चक्कर में. आती है ।
लगता न हाथ कुछ, व्यर्थ ठगी जाती है ।।

× × ×

बी. ए., एम. ए. एवं, वकील बैरिस्टर ।
वैज्ञानिक-डाक्टर, औ प्रसिडेंट-मिनिस्टर ।।
मजहब के पल्ले, जब ये पड़ जाते हैं ।
तब इनके भी, मस्तिष्क बिगड़ जाते हैं ।।

प्रत्येक समय ये, तर्क वितर्क करेंगे ।
बालकी खाल की खाल, उतार धरेंगे ।।
पर मज़हब का आवरण ओढ़ जब लेंगे ।
ये तर्क बुद्धि से, काम नहीं तब लेंगे ।।

मिट्टी की हण्डी क्रय करने जाएँगे।
रह सावधान, धोखा न वहाँ खाएँगे॥
पर मज़हब को तो, कभी नहीं परखेंगे।
औरों के आगे ही, बस तर्क रखेंगे॥

मज़हब का ऐसा बुरा नशा होता है।
आँखों को खोले हुए, मनुज सोता है॥
यह कभी नहीं सच को स्वीकार करेगा।
उसकी असत्य बातों से प्यार करेगा॥

× × ×

पकड़ी बातों का मोह छोड़ना होगा।
सत्य की ओर मुख तुम्हें मोड़ना होगा॥
तब ही समझो, सत्य को पकड़ पाओगे।
ऐसा न किये पर पीछे रह जाओगे॥

× × ×

एक ही माँप की क्या अनेक सत्ताएँ?
एक ही स्थान पर, रहती क्या बतलाएँ??
इसलिए वेद ने कहा, एक ही मानों।
उसको अनेक मत समझो, अय! विद्वानों!!

दो नहीं, तीन भी नहीं, चार मत जानो।
वह पाँच नहीं, छे नहीं सात मत मानो॥
वह नहीं आठ नौ नहीं, नहीं दस बोलो।
वह मात्र एक है उसे एक बस बोलो॥

वह ईश्वर तो है एक जानते सब है।
एक ही मानते, दुनियाँ के मज़हब है॥

पर मानव, जिस ईश्वर की करता रचना।
है कठिन सदा ही उस ईश्वर से बचना ।।

कहता हैं, मैं कहता हूँ उसको मानो।
लक्षण जो मैं करता हूँ, वह सच जानो ।।
है सही वही, जो कुछ भी मैं कहता हूँ।
ईश्वर के, आगे आगे मैं रहता हूँ ।।

जिसको चाहा, दे दिया स्थान ईश्वर का।
ईश्वर से बढ़ कर, मान किया उस नर का ।।
जा बैठा ईश्वर तो है एक किनारे।
कितने ही अब, ईश्वर बन गये हमारे ।।

नाना प्रकार के, गुण स्वभाव वाले हैं।
नीले, पीले, गोरे एवं काले है ।।
है पीतल, ताँबे, लकड़ी औ पत्थर के।
है अपने अपने ईश्वर, अपने घर के ।।

इनमें कइयों है नर कइयों नारी है।
है कई विवाहित, कई ब्रह्मचारी है ।।
कुछ पीते इनमें मद्य, निरे का भी है।
कुछ निर्धन है तो कुछ, धन के स्वामी है ।।

कुछ तो इनमें, बलिदान लिया करते हैं।
पशुओं का प्रतिदिन, रक्त पिया करते हैं ।।
मानव द्वारा, इन देवों की है, रचना।
अत्यंत कठिन है, इस रचना से बचना ।।

यह सारा, मिथ्या ज्ञान नहीं तो क्या है ?
यह ईश्वर का अपमान नहीं तो क्या है ??

× × ×

यदि किसी व्यक्ति को कहें कि तू पत्थर है।
अथवा कह दें तू वानर है शूकर है ?
तो निश्चय ही, कर क्रोध बिगड़ जाएगा।
वह बुरा मानकर लड़ने को आएगा ॥

पर तुमने क्या-क्या बना दिया ईश्वर को।
पत्थर, पशु मानव, वानर जगदीश्वर को ॥
सोचो ! क्या यह सत्कार किया है तुमने।
क्या यथायोग्य व्यवहार किया है तुमने ॥

ईश्वर को ईश्वर मान आप यदि चलते।
वास्तविक रूप से, उसको नहीं बदलते ॥
आपस में ये मतभेद न इतने बढ़ते।
ईश्वर का लेकर नाम न यों लड़ पड़ते ॥

× × ×

कुछ हैं सुझाव, अध्ययन कीजिये उनका।
मन लगा ध्यान से मनन कीजिये उनका ॥
बुद्धि में बैठ जाने पर उनको मानो।
स्वीकार न करिये यदि असत्य है जानो ॥

पहले, कसौटियों पर हर बात परखिये।
फिर सत्य ग्रहण का, लक्ष सामने रखिये ॥
हो मात्र प्रतिज्ञा, सत्य ग्रहण करने की।
मत रखो भावना मनमें कुछ डरने की ॥

निर्भ्रान्त सत्य बातों का संग्रह करिये।
हो सर्वमान्य, बस, ध्यान उन्हीं पर धरिये ॥
हो त्रैकालिक वह सत्य, सार्वभौमिक हो।
आध्यात्मिक, दैविक, चाहे वह भौतिक हो ॥

आधार, सृष्टि नियमों का लेकर चलिये ।
जो बुद्धि शून्य हों, उन बातों से टलिये ।
फिर अनहोनी, बातों को महत्व न दीजे ।
सर्वदा, ध्यान में ये बातें रखलीजे ।।

जो जैसा हो ? उसको, वैसा ही कहिये ।
कुछ का कुछ कहने को मत तत्पर रहिये ।।
अपनी पकड़ी बातों का मोह न करिये ।
प्रतिपक्षी की बातों से द्रोह न करिये ।।

गिर जाए अपना पक्ष हार मत समझो ।
वस मात्र सत्य को ही अपना व्रत समझो ।।
उत्सुकता से, सत्य की शोध होने दो ।
अपने वचनों का मत विरोध होने दो ।।

प्रतिपक्षी जैसी बात कहे वैसी ही ।
वदले में उसको तुम कह दो जैसी ही ।।
यदि वह माने तो तुम भी उसकी मानो ।
वह नहीं मानता हो ? तुम भी मत मानो ।।

मत वातों वातों में, उलझो उलझाओ ।
विपियान्तर होकर भी, मत वात वढ़ाओ ।।
मत उसे चिढ़ाओ, और उसे बनाओ ।
लज्जित न करो, एवं न उसे झेंपाओ ।।

जव विपक्षियों का, खण्डन करना ठानो ।
साथ ही साथ, अपनी कमियों को मानो ।।
मत वातचीत में, उतरो अपने स्तर से ।
अपशब्द न वोलो, आप न अपने स्वर से ।।

× ×

इस मानव का, स्वभाव ही कुछ ऐसा है ।
तुम रखो ध्यान में, हम कहते जैसा है ।।
मज़हब से हट कर, बात करेगा जब ये ।
सच्ची बातें, स्वीकार करेगा तब ये ।।
विज्ञान तर्क को, स्थान सदा यह देगा ।
आगई बुद्धि में, तुरत मान यह लेगा ।।

विज्ञान और मज़हब में, अति दूरी है ।
उनके आगे यह आती मजबूरी है ।।
मज़हब की बातें, छोड़ नहीं पाते हैं ।
इसलिए, वकालत करते ही जाते हैं ।।

आश्चर्य यही, हाँ होता रहता हम को ।
हम देख रहे हैं, सब में इस ही क्रम को ।।
कहना पड़ता, है यह मानव की माया ।
इसकी माया का भी न पार है पाया ।।

× × ×

जिस समय सत्य से, मानव हट जाता है ।
अर्थात् झूठ को, लेकर डट जाता है ।।
झगड़ा होता, आरंभ तभी यह जानो ।
क्या छुपा हुआ है, तथ्य उसे पहचानो ।।

अब, उसी विषय पर फिर से आ जाना है ।
है जिसे समझना, सबको समझाना है ।।

वह ईश्वर तो, परिवर्तनशील नहीं है ।
निश्चय ही वह, होता तबदील नहीं है ।।

इस पर भी उसमें, परिवर्तन लाता है।
ऐसा करना, मानव के मन भाता है।।
है अज़र, अमर, वह ईश्वर अविनाशी है।
यह सदा, मानता, उसको सुख राशी है।।
है सदा एक रस, उसे जानता भी है।
बीमार हुआ, मर गया मानता भी है।।

वह नहीं सिकुड़ता, और नहीं बढ़ता है।
वह कभी न गिरता, और नहीं चढ़ता है।।
वह छिद्रों नस नाड़ियों रहित ही जब है।
सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्थूलातिस्थूल ही तब है।।

परिपूर्ण, शक्ति सम्पन्न व्यक्ति जो होगा।
किंचित न कभी भय, कहीं न उसको होगा।।
चैतन्य, जीव चैतन्य कहाता, ईश्वर।
×पर जीवों में, चेतनता लाता ईश्वर।।

जीव और प्रकृति, अतिसूक्ष्म कहाते है पर।
इन दोनों से, अत्यंत सूक्ष्म है ईश्वर।।
ईश्वर समान है, हुआ न होगा कोई।
उसके समान तो है बस समझो वोही।।

× × ×

पाँचों तत्वों ने, अति घमण्ड में आकर ।
अपनी महिमा को गाया वढ़ा चढ़ा कर ॥
इन पाँचों ने यों कहा, यक्ष से जा कर ।
निर्णय हमको दे दीजे, आप कृपा कर ॥
है कौन वड़ा पाँचों में हमें बता दें ।
विन पक्षपात के, स्पप्ट हमें समझा दें ॥

तव कहा यक्ष ने पृथक्-पृथक हो जाओ ।
इस तिनके को, अपना वल लगा हटाओ ॥
पाँचो ही अपने वल को, लगा न पाए ।
सामर्थ्य हीन हो, उसको हटा न पाए ॥
क्यों घमण्ड यों, काफूर हो गया इनका ।
क्यों ? कहो, नहीं हट पाया था वह तिनका ।

आकाश अकेला, कभी न कुछ कर सकता ।
वायु भी अकेला कभी नहीं चर सकता ॥
अग्नि भी अकेला जला न कुछ पाता है ।
जल कभी अकेला गला न कुछ पाता है ॥
विन इन चारों के कभी न वनती धरती ।
है शक्ति ओर ही जो है रचना करती ॥
इन पहेलियों का, भाव जान कर चलिये ।
इतिहास आप मत, इन्हें मान कर चलिये ॥

वनना, वढ़ना, एवं फलना रुक जाना ।
साथ ही सिकुड़ना, पूर्व रूप में आना ॥
ऐसा होने को ही विकार कहते हैं ।
ये सब विकार, प्रकृति में सदा रहते हैं ॥
ये सब विकार, ईश्वर में रहा न करते ।
साकार उसे, इससे ही कहा न करते ॥

× × ×

ये दशों इन्द्रियाँ, पाँच प्राण एवं मन।
धारण करवाता ईश्वर ही देकर तन ॥
धारण करता है, उसे जीव है जानों।
जीवों के, जो है लक्षण ये पहचानो ॥
इच्छा व द्वेष, कामना आदि का करना।
सुख-दुख सहना, पाना शरीर फिर मरना ॥
अल्पज्ञ जीव के, कहलाते लक्षण है।
ईश्वर में कभी न, ये आते लक्षण है ॥

× × ×

ईश्वर, हम तुम ज्यों, मिलता कभी नहीं है।
निश्चल है वह तो, हिलता कभी नहीं है ॥
अत्यन्त दूर है, वह अत्यन्त निकट है।
अत्यन्त सरल है, वह अत्यन्त विकट है ॥
इस रहस्य को भी, आप जान कर चलिये।
क्या छुपा तथ्य है, उसे छान कर चलिये ॥
वह समय स्थान से, दूर नहीं है जानो।
है गुणों ज्ञान की, दूरी यह पहचानो ॥
दिख पाएगा, अज्ञान दूर जब होगा।
गुण अपनाओगे, आप, मिलन तब होगा ॥
हम तुम मिलते जैसे, फिर भी न मिलेगा।
हम दीख रहे, वैसे वह नहीं दिखेगा ॥
वह ज्ञान चक्षु से, बस समझा जाएगा।
गुण अपनाए, हर्षोल्लास छाएगा ॥

क्या कहीं, आत्मा को, देखा जाता है।
है सूक्ष्म तत्व, केवल समझा जाता है॥
बस इसी भाँति, ईश्वर की बात समझिये।
रहता हरदम है, अपने साथ समझिये॥
लगभग उसको, आकाश जानकर चलिये।
पर उसे आप, चैतन्य मानकर चलिये॥
प्रकृति में जीव में भी, व्यापक है ईश्वर।
आकाश नहीं है. इनमें चलें समझकर॥
सर्वांगी, उदाहरण उसका न मिलेगा।
अनुपम की, उपमा कैसे कोई देगा॥

शक्ति का और महिमा का अन्त नहीं है।
कोई, उसके जैसा श्रीमंत नहीं है।
उस जैसा वो है, कोई जोड़ नहीं है॥
कर सकता उसकी है, कोई होड़ नहीं है।

वह स्वयं न चलता, किन्तु चलता सबको।
वह नहीं घूमता, किन्तु घुमाता सबको।
वह प्रकट न होकर, प्रकट किया करता है।
अर्थात् नहीं, अवतार लिया करता है॥

ईश्वर में, यदि आना जाना मानोगे।
जीना, मरना, पीना, खाना मानोगे?
फिर न जन्म मृत्यु से, रहित रह पाएगा।
क्या वचन विरोध नहीं यह कहलाएगा॥

वह बिना करों के, जगत बना देता है।
मानव हाथों से, भवन बना लेता है॥
ईश्वर सूरज द्वारा, प्रकाश देता है।
यह मानव भी, दीपक सुलगा लेता है॥

ईश्वर समुद्र को वना दिया करता है।
मानव, कूएँ को खोद लिया करता है॥
ईश्वर, जल बादल द्वारा वर्षाता है।
मानव पानी नल द्वारा ले आता है॥

ईश्वर फल अन्नादिक उपजा देता है।
मानव पकवान बना कर खा लेता है॥
मानव कर्मों को, करके दिखलाता है।
कर्मों का फल, वह ईश्वर पहुँचाता है॥

दोनों के कामों में, महान अन्तर हैं।
जो काम है जिनके, उन पर ही निर्भर है॥
मानव ईश्वर का काम नहीं कर सकता।
ईश्वर, मानव के जैसा, काम न करता॥

दोनों के अपने क्षेत्र, पृथक् रहते है।
दोनों, अपनी अपनी, धुन में वहते हैं॥

श्रमकर मानव, विश्राम लिया करता है।
ईश्वर न कभी, विश्राम किया करता है॥
ईश्वर महत्व का ही, बस काम करेगा।
पर मानव, जैसा चाहे कर गुजरेगा॥

ईश्वर न कभी भी, परिवर्तन चाहेगा।
यह जीव सदा ही, परिवर्धन चाहेगा॥
ईश्वर अन्याय न करके, दिखलाएगा।
पर यह मानव, जो चाहे कर जाएगा॥

अपनी अपनी सीमा है इनकी जानो।
सच्चे अर्थो में उन्हें आप पहचानो॥

× × ×

ईश्वर की चर्चा हो, ईश्वर के स्तर से।
बातें न करो, केवल ऊपर ऊपर से॥
ईश्वर को तुम, अपने समान मत समझो।
मानव को तुम, उससे महान मत समझो॥

मानव मानव है, ईश्वर तो ईश्वर है।
उसके समान तो, नहीं किसी का स्तर है॥

वह एक है, पर उसके है काम अनेकों।
इसलिए, गिनाए गए है नाम अनेकों॥
वह पिता, पुत्र, माता, भ्राता सब कुछ है।
वह मित्र, सखा, वैरी, त्राता सब कुछ है॥

रचना करने से, ब्रह्मा कहलाता है।
पालन करने पर, विष्णु नाम पाता है॥
संहार किये पर कहलाता प्रलयंकर।
कल्याण सभी का, करता बनकर शंकर।

उत्तम गुण जितने हैं, उससे आए हैं।
उससे लेकर, गुण सब ने अपनाये है॥
आधार सभी का, वह जीवन दाता है।
गुरु का गुरु गुरु का गुरु वह कहलाता है॥

है प्राणों का भी प्राण, मानिये उसको।
प्रत्येक समय, प्रत्यक्ष जानिये उसको॥

× × ×

प्रायः मानव, विश्वास यही रखता है।
वह ईश्वर, जो चाहे सो कर सकता है ॥
हम, उन्हें पूछना, कुछ बातें चाहेंगे ।
मानेंगे, यदि तर्कों से, समझाएँगे ।

क्या ईश्वर, चाहे तो, वह मर सकता है ?
क्या इससे उल्टी रचना कर सकता है ?
वस्तु के बिना, क्या? वस्तु बना सकता है ।
क्या बिना बीज के वृक्ष लगा सकता है ?

क्या बिना कर्म के फल भी दे सकता है ?
जिसके-चाहे प्राणों को ले सकता है ॥
क्या अपने नियमों से हट, चल सकता है ।
क्या अन्यो की इच्छा में ढल सकता है ।

क्या अपने में, परिवर्तन ला सकता है ?
अपने में, दुगनी शक्ति बढ़ा सकता है ?
सृष्टि का अन्त आरंभ रोक सकता है ?
क्या हाथ पकड़कर हमें टोक सकता है ?

क्या कहो! कभी पीड़ित भी हो सकता है ?
क्या कभी, गाढ निद्रा में, सो सकता है ?
क्या कभी, वासनाओं में, फंस सकता है ?
क्या वह प्रसन्न होकर भी, हँस सकता है ?

क्या हीन काम करके दिखला सकता है ?
क्या पतनावस्था में वह जा सकता है ?
यह ध्यान रहे ऐसा न किया करता है ?
हम जो चाहे जैसा न किया करता है ॥

× × ×

ईश्वर को कहते, कर्ता और अकर्ता ।
जीवन दाता है वह जीवन भी हर्ता ।।
देता है हमको जन्म, मारता भी है ।
दुःखित करता है, वही तारता भी है ।।

दुष्कर्म किये पर, वही शत्रु बन जाता ।
शुभ कर्म किये पर, वनकर मित्र दिखाता ।।
है यही विरोधाभास जिसे कहते हैं ।
है विरोध सा अविरोध इसे कहते हैं ।।

× × ×

क – में – अ व्यापक हो रहता जैसे ही ।
सब में व्यापक ईश्वर रहता वैसे ही।।
अ–विन–क का अस्तित्व नहीं वन पाता ।
त्यों ही ईश्वर विन, धरा सभी रह जाता ।।

जड़ चेतन को, उसका जव मिले सहारा ।
संसार चक्र, चलता तब उसके द्वारा ।।
प्रकृति में यही, जीवों में दुर्बलता है ।
उसके विन इनका काम नहीं चलता है ।।

है सत्य तथ्य, प्रत्यक्ष ध्यान में रखिये ।
बुद्धि से तर्क से, इसको सदा परखिये ।।

इन्द्रियों तथा मन के बिन इन जीवों को ।
होता न स्वयं का भान है जिन जीवों को ।।
ईश्वर देता न शरीर न कुछ कर पाते ।
मूर्च्छावस्था में, पड़े सदा रह जाते ।।

प्रत्यक्ष है, यह भी तथ्य, जानकर चलिये।
यह बात, हमारी, सत्य मान कर चलिये ॥

बिन देह दिए के, यदि है काम चल जाता।
निश्चय ही, फिर देता क्यों देह विधाता ॥
इसलिए, मानना पड़ता, बात सही है।
देही जो दी है, कारण रहा यही है ॥

आधार इसी का लेकर हम कहते हैं।
मुक्ति में जीव जो जाते हैं रहते हैं ॥
सूक्ष्मातिसूक्ष्म इन्द्रियाँ और तन इनको।
मिलना चहिए साथ ही साथ मन इनको ॥

कारण शरीर की बात जानते सब हैं।
जब देह छोड़ता जीव है, रहता तब है।
बिन देही के निर्जीव, जीव रहता है।
अनुमान हमें प्रत्यक्ष यही कहता है ॥

मुक्ति में, जीव जो भी जाया करते हैं।
वे पुनः लौट कर भी, आया करते हैं ॥
जब मान लिया जाना प्रमाण आने का।
फिर रहा काम क्या? अब संशय लाने का ॥

क्या सीमित कर्मों का कसीम फल देगा।
क्या ईश्वर भी ऐसा अन्याय करेगा?
जीवों में परिवर्तन की चाह रही है।
प्रत्यक्ष देख लीजे, यह बात सही है ॥

यह नहीं, एक रसता में चाह रखेगा।
यह विभिन्नता में ही, उत्साह रखेगा ॥

यह एक समय में. जिसमें सुख मानेगा।
दूसरे समय में, उसमें—दुख मानेगा॥
स्थिरता को तो, यह नहीं पसंद करेगा।
चंचलता को यह, लिये सदा विचरेगा॥

इस अटल सत्य को, लोग न सच समझेंगे।
पर हम तो, इसको ही है तथ्य कहेंगे॥

× × ×

जग में आना ही है, प्रमाण जाने का।
जग से जाना ही है, प्रमाण आने का॥
मिलना, प्रमाण लो मान बिखरने का है।
जो जन्म मिला यह, प्रमाण मरने का है॥

आरंभ है जिसका, अन्त है उसका निश्चय।
जिसका विकास होगा, होगा उसका क्षय॥
यह जगत् बना, इसलिए मिटेगा मानो॥
मिटने वाला यह पुनः बनेगा जानो॥

भूतौ भविष्य, इस वर्तमान के द्वारा।
माने जाते, हैं कहना यही हमारा॥
यह सृष्टि कह रही और दृष्टियाँ भी है।
जो इसे बनाया, उनकी रचना की है॥

है अन्य किनारे, यह कह रहा किनारा।
दिख नहीं रहे पर? कह यह रहा किनारा॥
है एक दूसरे का प्रमाण यह जानो।
अनुमान लगा, है सत्य उसे पहचानो॥

है द्रव्य कई जो दीख नहीं पाते हैं।
वे पृथक ढंग से ही, समझे जाते हैं॥
अनुमान सिद्ध करता है, इन सारों को।
आँखें न देख पाती है, जिन सारों को॥

इनमें ईश्वर है एक, मान कर चलिये।
विज्ञान तर्क से, उसे जान कर चलिये॥

× × ×

जो नहीं जन्म लेगा, वह नहीं मरेगा।
जो नहीं मिलेगा, वह न कभी बिखरेगा॥
जो आएगा ही नहीं, न वह जाएगा।
जो जाएगा ही नहीं, न वह आएगा॥
उत्थान न होगा, उसका पतन न होगा।
यह कभी हमारा, मिथ्या कथन न होगा॥
है परिवर्तन से रहित, इसी के कारण।
ईश्वर कर सकता नहीं, देह को धारण॥
अव्यय, अविनाशी, ईश्वर कहलाता है।
इसलिए नहीं, वह आता-न-जाता है॥

जो विविध योनियाँ, जीवों ने पाई है।
सुख-दुख पाती देती जो दिखलाई है॥
कुछ मानव धनपति, कुछ इनमें निर्धन है।
कुछ रोगी है, कुछ इनमें, स्वस्थ्य मगन है॥

कुछ रोगी ही, उत्पन्न हुआ करते है।
कुछ शीघ्र और कुछ, विलंब से मरते हैं॥
कइयों का, हो उत्थान, पतन होता है।
कोई हँसता है, तो कोई रोता है॥

कुछ लोग असुन्दर, तो कोई सुन्दर है।
कुछ है स्वतन्त्र, कुछ अन्यों पर निर्भर है॥
कुछ बिना यत्न के, सब कुछ पा जाते हैं।
कुछ यत्न किये पर, भी धक्के खाते हैं॥

पतिव्रता नारियाँ, कइयों दुख पाती है।
कुल्टा कइयों, सुख पाकर हर्षाती है॥
सत्पुरुष कहाते, किन्तु सताए जाते।
दुर्जन, निर्भय होकर, आनन्द उड़ाते॥

आस्तिकों! कहो क्या यह अन्याय नहीं है।
पूछो! ईश्वर से मिलता तुम्हें कहीं है॥

इन प्रश्नों को मत आप निरर्थक मानो।
क्या है रहस्य, इसके पीछे पहचानो॥
ईश्वर न कभी अन्याय, किया करता है।
जिसको जो देना, उसे दिया करता है॥

क्या है रहस्य, उस रहस्य को पहचानो।
मत टालो यों ही, सत्य तथ्य को जानो॥
मानवी योनि में, कर्म मनुज करता है।
उन कर्मों का, मानव कर्ता धर्ता है॥

उन कर्मों का निश्चय ही फल पाता है।
वह विविध योनियों में, आता जाता है॥
पशु की योनियाँ, मिला करती है किससे।
मानवी योनि में, कर्म किये थे जिससे॥

पशु भोग योनि में, मात्र भोगता फल है।
ईश्वर के ये, कहलाते नियम अटल है॥

सुख दुख मिलता है, कर्मो के ही द्वारा ।
विश्वास रहा है, यह ? ही सदा हमारा ।।
ईश्वर निमित्त कारण है फल दाता है ।
मानव, अपने कर्मो का निर्माता है ।।

जिस पशु के गुण, यह मानव अपना लेता ।
बस योनि उसी पशु की, ईश्वर है देता ।।
निज इच्छा से, कुछ भी न कहीं देता है ।
मानव, अपने कर्मों से, पा लेता है ।।

× × ×

इस पुनर्जन्म को, नहीं मानते जो है ।
उत्तर न कभी भी, देने पाते वो है ।।
सच समझो, उनका है सिद्धान्त अधूरा ।
उनके द्वारा, उत्तर न मिलेगा पूरा ।।

जब कर्मवाद को सत्यमान चलते हो ।
जब भाग्यवाद को, सत्यजान चलते हो ।।
फिर पुनर्जन्म को नहीं मानते क्यों हो ।
फिर पूर्व जन्म को झूठ जानते क्यों हो ।।

× × ×

जो पुनर्जन्म को, मान चला करते हैं ।
फिर भी न किसी का, कभी भला करते है ।।
हम उन्हें पूछते हैं, फिर क्यों रोते हो ।
दुष्कर्मों को करने, प्रेरित होते हो ?

ईश्वर को, न्यायाधीश, मानते तुम हो ।
अपने मुख से, हरदम बखानते तुम हो ?

फिर भी उसका भय कभी नहीं खाते हो।
उल्टे, धन्दे कर, मन में हर्षाते हो ।।

पापौर पुण्य को, मान लिया है तुमने।
है पाप पुण्य क्या, जान लिया तुमने।
दोनों के लक्षण, करके दिकलाते हो?
फिर भी, उन पापों को करने जाते हो ।।

× × ×

है अमर आत्मा, पुनर्जन्म होता है।
यह जीव, लगाता रहता नित गोता है ।।
यह बात, मान कर भी, हिंसा करते हो।
यह तथ्य, जान कर भी हिंसा करते हो ।।

ले जन्म, पिता, माता भी आते होंगे ।।
कर्मानुसार पशु भी बन जाते होंगे ।।
उनकी हत्या हाथों से अजी ! तुम्हारे?
होती होगी मन में कुछ आप विचारें ??

दूसरा जन्म, फिर तुम भी तो पाओगे।
अन्यों के हाथों से, मारे जाओगे ।।
क्या इसे, पुण्य का कार्य आप बोलोगें।
इस हिंसा को, क्या नहीं पाप बोलोगे ??

यह पाप नहीं, तो है क्या ? पाप बताओ।
फिर आप, पाप का, हमको माप बताओ ।।

ले आड़ धर्म की, हत्याएँ करते हो?
ईश्वर का लेकर नाम, प्राण हरते हो ??
कहलाते हो ? फेरभी, धर्म अनुरागी।
बनते हो करके पाप, पुण्य के भागी ।।

वुद्धि में वैठती वात नहीं यह अपने ।
हिंसक वनकर, देखते स्वर्ग के सपने ॥
हिंसा के करने से, यदि स्वर्ग मिलेगा ।
भगवान नर्क में फिर किसको भेजेगा ॥

मदिरा पीने को भी हो धर्म वताते ।
फिर दुराचार को भी, शुभ कर्म वताते ॥
फिर पाप नाम, रखने किसका जाओगे ।
जव पापों को ही, पाप न वतलाओगे ॥

× × ×

जो जैसा है उसको, वैसा ही कहना ।
अति करना नहीं, न भावुकता में बहना ॥
है उससे उसको, कम भी नहीं वताना ।
न व्यवहारिकता के विरुद्ध भी जाना ॥

स्तुति कहते है, वस इसे ध्यान में रखिये ।
निन्दा कहते है किसे ध्यान में रखिये ॥
जो अधम है, उसको उत्तम कह दर्शाना ।
जड़ को चेतन, चेतन को जड़ वतलाना ॥

विपरीत गुणों का मुख से वर्णन करना ।
दोषी को दोषी है, कहने में डरना ॥
निन्दा कहते हैं इसे, ध्यान में रखिये ।
कहते हैं प्रार्थना किसे ध्यान में रखिये ॥

पुरुषार्थ किये पर भी न काम बन पाए ।
सामर्थ्य हमारा जवकि काम न आए ॥
वन नम्र याचना, जगदीश्वर से करना ।
उत्तम भावों को उसके सन्मुख धरना ॥

यों किये प्रार्थना से साहस बढ़ता है।
दृढ़ता से मानव तब ऊपर चढ़ता है॥
जो ईश्वरीय गुण है, वे धारण करना।
औ जीव मात्र के कष्ट निवारण करना॥

दुर्गुण से रहकर दूर त्याग तप करना।
उसके स्वरूप को समझ फेर जप करना॥
यह है उपासना बात समझ यह लेना।
ईश्वर का स्थान न कभी किसी को देना॥

× × ×

मनमानी पूजा, भक्ति किये से ईश्वर।
धन भेट किये, होगा प्रसन्न जगदीश्वर॥
पापी की इच्छा पूर्ति किया करता है?
ऐसों को क्या वरदान दिया करता है॥

देता है तो, उत्पन्न प्रश्न यह होगा।
पापी का साथी, ईश्वर भी वह होगा॥
पापियों, दुर्जनों का, दल्लाल बनेगा।
इस जग का, क्या कैसा, फिर हाल बनेगा॥

जो दुराचार करता है, वह भी मानव।
हिंसक व जुआरी, कहलाता जो दानव॥
उसकी भी, इच्छा पूर्ति करेगा ईश्वर।
अपना, फिर कैसे नाम धरेगा ईश्वर॥

खुद गर्ज, चापलूसों में, औ ईश्वर में।
अन्तर न रहेगा, उनके इसके स्तर में॥
इस भाँति भला किसका क्या हो पाएगा।
पतितावस्था में ही मानव जाएगा॥

क्या करता ईश्वर, नष्ट पा के फल को ?
क्या मिटा सकेगा अपने, नियम अटल को ॥
यों करके भी, क्या कहलाएगा न्याई ।
यह बात, हमारे नहीं समझ में आई ॥

इस क्षमा वाद ने, इतना पाप वढ़ाया ।
वाणी द्वारा, जासकता नहीं वताया ॥
ईश्वर द्वारा, यदि पाप क्षमा हो जाता ।
फिर कहो ! आप! यह जीव दण्ड क्यों पाता ?

है बात सत्य, वह क्षमा नहीं करता है ।
बिन दण्ड दिए, वह पाप नहीं हरता हैं ॥
ईश्वर से, प्रतिदिन, क्षमा माँगते जो है ।
क्या कष्ट नहीं पा रहे ? वताओं ! वो हैं ॥

पापी को मानो, क्षमा कर दिया होता ?
दुखित होंकर क्यों, जीव वताओ रोता ?

यह क्षमा मांगना, निश्चय कायरता है ।
आस्तिक होता वह, कभी नहीं डरता है ॥
पापों को करने, वीर डरा करते हैं ।
औ पापों का, प्रतिकार, करा करते हैं ॥

पापों का फल, भोगते हुए हँसते हैं ।
वे पाप पंक में, पुन, नहीं फसते हैं ॥
पापी के मानो, पाप क्षमा हो जाते ।
सब ही मानव फिर, सीधे स्वर्ग सिधाते ॥

वेदानुकूल स्तुति और प्रार्थना करिये ।
वेदानुकूल रखकर आचरण विचारिये ॥
तो ही है भला, अन्यथा दुख पाएँगे ।
विपरीत कार्य यदि, करते ही जाएँगे ॥

ईश्वर दयालु है, दया किया करता है।
साथ ही न्याय पर ध्यान दिया करता है॥
दे उदाहरण, हम तुम को समझाते हैं।
प्रत्यक्ष जगत में, दिखने में आते हैं॥

धनवान, मस्त रहता है अपने धन में।
निर्धन भी, रहता मस्त है अपने मन में॥
शासक रहता है, मस्त प्राप्तकर पद में।
शासित रहता है, मस्त स्वयं के मद में॥

दुख-सुख दोनो भी साथ साथ रहते हैं।
गत कर्मों के फल, जो है सब सहते हैं॥
अपने से, घ्रणा न कोई दर्शाता है।
यों न्याय, दयाकर ईश्वर दिखलाता है॥

जीवों ने, जो जो प्राप्तयोनियां की हैं।
वे दण्ड रूप में, ईश्वर ने ही दी हैं॥
पर सभी मस्त, दिखने में ये आते हैं।
न्याय के साथ में, दण्ड सभी पाते हैं॥

× × ×

लेकर मज़हब का नाम, लोग लड़ते हैं।
कट्टरता दिखलाने, आगे बढते हैं॥
उत्तम नियमोंपर, स्वयं नहीं चलते हैं।
लेआड़ धर्म की, लोगों को छलते हैं॥

सत्य पर चलो, सारे मज़हब कहते हैं
चलने न कहीं, कोई तत्पर रहते हैं॥
अपने विरोधियों को गाली देते हैं।
सत्पुरुष स्वयं को, सदा समझ लेते हैं॥

पीतें, शराब औ दुराचार में रत हैं।
संयम का, पालन करते कभी न व्रत है ॥
ऊपर की कट्टरता ये, दिखलाते हैं।
मोमीन, समझ अपने को, इतराते हैं।

फिर भी न समझते हैं, पापी अपने को।
कुछ ध्यान लगा, इनकी हालत तो देखो ?
इनके मजहब की जोभी। छाप लगाले।
इनके हाँ में हाँ, जो भी व्यक्ति मिलाले ॥

फिर दुराचार, कर लें औ पीले खालें।
सब कुछ करके, दुनिया में नेक कहालें ?
नेकी की, ऐसी बना रखी परिभाषा।
होते देखा है, हमने यही तमाशा ॥

इसको ही कहते. मानव की माया है।
लेकर मज़हब की आड़, जुल्म ढाया है ॥

अपने वालों को, हरदम क्षमा करेंगे।
अन्यों के शिर पर, प्रतिदिन दोष धरेंगे ॥
औरों की हिन्सा में, न पाप मानेंगे।
हिन्सा करके भी, उसे पुण्य जानेंगे ॥

जिस मजहब के पीछे जन बल होता है।
सत्ता का बल एवं धन बल होता है ॥
ऐसा मजहब ही, दुनिया पर छाता है।
सत्य और न्याय, शिर धुन कर रह जाता है ॥

विज्ञान, झूठ जिन बातों को, कहता है।
महजब उसको, सच्ची कहता रहता है ॥

× × ×

सिद्धान्त, सत्य निश्छल भी होना चहिये ।
उसके पीछे, जन बल भी होना चहिये ॥
बुद्धि के साथ, होना चरित्र धन बल भी ।
तन बल भी होना, और साथ मन बल भी ॥

"केवल" न सत्य, आगे बढ़ने पाता है ।
प्रत्यक्ष देख लो ! दिखने में आता है ॥

कुछ व्यक्ति जगत में, ऐसे भी आए हैं ।
पाना न जिन्हें था, वे भी यश पाए हैं ॥
दल बल ने देकर साथ पुजाया उनको ।
कर व्यर्थ समर्थन, मात्र निभाया उनको ॥

× × ×

चालीस वर्ष की थी, जो विधवा नारी ।
रख लिया, एक नौकर करने रखवारी ॥
पच्चीस वर्ष का युवक, चाह कर बैठा ।
उससे अपना, फौरन विवाह कर बैठा ॥

वह युवक, वर्ष जब था पचास में आया ।
करके विवाह कइयों, संतोष न पाया ॥
दस वर्षों की कन्या वरना मन भाया ।
अपना विवाह, उससे वह तुरत रचाया ॥

गोदी का लेकर, पुत्र ब्याह कर डाला ।
तल्लाक दिला, खुद ने निकाह कर डाला ॥
यह ईश्वर का आदेश हुआ है कह कर ।
अनुयाई सारे, बैठ गये चुप रह कर ॥

× × ×

भगवान बुद्ध के शिश्य कहाने वाले ।
बन गये आज, पशुओं को खाने वाले ।।
गुरु की आज्ञा को कहाँ मान देते हैं ।
गुरु को वाणी पर मात्र स्थान देते हैं ।।
रह गया मात्र बुद्धम् शरणं गच्छामी ।
बन गये सभी अब पशु हिंसा के हामी ।।

× × ×

ये जितने भी ईसा के अनुयायी हैं ।
अब कहाँ नीति ईसा की अपनाई है ।।
पीते शराब सब, दुराचार में रत है ।
अब कौन पालता सदाचार का व्रत है ।।

ईसा की लेकर आड़, चाल चलते हैं ।
जग पर छाने ये, लोगों को छलते हैं ।।
ये सदा युद्ध का वातावरण बनाते ।
मानवता को ये, कहाँ कहो ? अपनाते ।।

× × ×

उत्तम महान, कुछ व्यक्ति हुए हैं ऐसे ।
यह दुर्बल वाणी, करें प्रशंसा कैसे ?
पर उनको कोई, नहीं जान पाया है ।
देखो ! यह भी, कैसी ? विचित्र माया है ।।

ऋषि दयानन्द, जो बाल ब्रह्मचारी थे ।
सच्चे आस्तिक, संयमी व व्रतधारी थे ।।
उनके बतलाओ ! कितने अनुयाई है ।
जनता, कितनी उनके पीछे आई है ।।

उद्विग्न कभी मन ऐसा हो जाता है।
हो उदासीन, अत्यन्त दुःख पाता है॥
विद्वद्जन करते, समाधान आए हैं।
पर पूर्ण रूप से, हम न समझ पाए हैं॥

× × ×

है प्रश्न ? नित्य जो, पशु मारे जाते हैं ?
क्या वे अपने; कर्मों का फल पाते हैं ?
जो मार रहे वे, दण्ड इन्हें देते हैं ?
या ? इन्हें मार, वे पाप कमालेते हैं ??

इसका सुनिये, उत्तर है यही हमारा।
फल मिलता है, केवल ईश्वर के द्वारा॥
यदि नहीं कर्मफल, होता इनको पाना।
तो फिर ईश्वर को, था क्या ? कठिन बचाना॥

मरने वाले, पा रहे पाप का फल है।
सन्देह नहीं निश्चित, यह नियम अटल है॥
पर मार रहा, उसको अधिकार नहीं है।
उसका समझो ! यह सद्व्यवहार नहीं॥

इसलिए इसे, समझो कि आतताई है।
वास्तविक दृष्टि में, यह तो अन्याई है॥
अन्याई को तो, दण्ड मिलेगा निश्चय।
बोया इसने जो, बीज, खिलेगा निश्चय॥

× × ×

यह सृष्टि बनी क्यों हमने बतलाया है ॥
कारण, प्रमाण देकर के, समझाया है।
किस भाँति बनी, अब यह भी बतलाते हैं।
दृष्टांन्त, सहित लो, समझो समझाते हैं ॥

इस भाँति बना, जग जगदीश्वर के द्वारा ।
बतलाते हैं वेदों का लियें सहारा ॥
थी मूल रूप में प्रकृति उसे ईश्वर ने ।
अपने ईक्षण से, उसको दिया उभरने ॥

आकाश तत्व को, गति में पहले लाया ।
पश्चात वायु को, गति देकर प्रकटाया ॥
फिर किया अग्नि उत्पन्न बाद में जल को ।
कर मृतिका को, उत्पन्न बनाया स्थल को ॥

वृक्षादि, वनस्पतियों को पुनः उगाया ।
फिर शाक हारियों पशुओं को, प्रकटाया ॥
पश्चात् मांसाहारीं, पशु जग में आए ।
अन्त में मानवों ने, मानव तन पाए ॥

×ये सभी हुए उत्पन्न इसी धरती से ।
जी रहे आज भी तो हम सभी इसी से ॥
इस कारण ही, धरती कहलाती माता ।
ईश्वर कहलाता, पिता जन्म का दाता ॥



स्मित्सोनियन इन्स्टिटयूशन
(SMITHSONIAN INSTITUTION)

अमरीका में एक वैज्ञानिक संस्था है जिसमें डॉ. क्लार्क नामी एक प्रसिद्ध प्राणिशास्त्री काम करते हैं। उनके एक लेख का जो Quarterly Review of Biology नामक पत्र में छप चुका है। निम्न लिखित उद्धरण दिया जा रहा है —

युवतियाँ, युवक जन्मे बिन मात पिता के ।
फिर चली मैथुनी, सृष्टि गर्भ से माँ के ।।
वेदों का आया ज्ञान चार ऋषियों में ।
पारंगत वे हो गए सभी विषयों में ।।

आदित्य, अग्नि, अंगिरा, वायु कहलाए ।
ये आदि पुरुष, आरंभ सृष्टि के आए ।।
कर के, विकास फिर, रहने लगे घरों में ।
ब्राह्मण, क्षत्री वन, बटे वैश्य वर्गों में ।।

होएगा कैसे अन्त, सुनो ! उस क्रम को ।
जो स्पष्ट बात है, सुनो! त्याग कर भ्रम को ।।
मानव का होता अन्त प्रथम यह जानो ।
पक्षी, पशुओं का, अन्त बाद में मानो ।।

फिर धरती का भी ह्रास वृक्ष जंगल का ।
हो जाएगा फिर नाश, समझलो जल का ।।
फिर अग्नि वायु का, होगा नाश समझिये ।
फिर तो न रहेगा, यह आकाश समझिये ।।

"According to Dr. Clark's belief man appeared in the PLIOCENE age just pieceeding the ICE age. " He appeared suddenly and in substantially the same form as he is today. There is not the slightest evidence of his existance before that time. He appeared able to walk, able to think, and able to defend himself. Dr. Clark holds there are no missing links".

"डॉ. क्लार्क के मतानुसार मनुष्य हिम युग से ठीक पूर्व प्लायोसीन युग में हुआ । वह अचानक उत्पन्न हुआ और सर्वथा इसी आकार में जैसा कि आज है । इससे पूर्व उसकी सत्ता का कोई प्रमाण नहीं । वह उत्पन्न होते ही चलने, विचारने तथा आत्मरक्षा करने में समर्थ था । डॉ. क्लार्क का सिद्धान्त है कि उससे पहले की कोई कड़ी गुम नहीं है ।

मौलिक स्वरुप में सभी वदल जाएँगे।
हो प्रकट यही फिर अवसर पर आएँगे॥
परिवर्धन होना रहा सृष्टि का गुण है।
परिवर्धन करता है जो व्यक्ति निपुण है॥

स्वाभाविक सब में, ज्ञान स्वयं रहता है।
नैमैतिक, फिर ईश्वर द्वारा वहता है॥
प्रभु हृदयों में, प्रेरणा किया करता है।
आरंभ सृष्टि के, उसे दिया करता है॥

फिर ज्ञान विशेष, वढ़ाता है यह मानव।
उन्नति करके, दिखलाता है यह मानव॥
अनिवार्य नहीं है, उन्नति का करना ही।
सर्वदा निरन्तर, आगे को बढ़ना ही॥

स्वाधीन रखा है हमें कर्म करने में।
अर्थात् धर्म करने, अधर्म करने में॥

पशु पक्षी सब ये, भोग योनि कहलाती।
स्वाधीन कर्म करने ये कभी न पाती॥
जैसी स्थिति है ? थी वैसी सदा रहेगी।
योनियाँ कभी, वदली, न, कभी वदलेगी॥

डार्विन का कहना, सत्य मान मत चलिये।
यह वात हमारी, झूठ जान मत चलिये॥
प्रत्यक्ष वात लिख समझाते हैं हम जो ?
अपने शरीर के, उदाहरण से समझो ??

मानव जब, दौड़ लगा कर दिखलाता है।
तब शरीर में अति वायु उभर आता है॥
पश्चात् अग्नि का वेग बढ़ा करता है।
हो प्रकट पसीना, शरीर से झरता है॥

कल्पना कीजिये स्नान नहीं करने पर।
जूएँ किटाणु हो प्रकट बनालेते घर॥
बिन मात पिता के, ही शरीर बन जाते।
स्वयमेव सभी वे, अपना काम चलाते॥

× × ×

कुछ लोगों का, अपना विचार है ऐसा।
बतलाते हैं हम, कहा उन्होंने जैसा॥
आरंभिक अंतिम सृष्टि इसे बतलाते।
पर प्रबल प्रमाण न सम्मुख धरने पाते॥

हम उन्हें पूछते ? यह किसलिए बनी है ?
समझा दें हमको कि इसलिए बनी है॥
जो भी कारण हमको ये बतलाएँगे ?
दूसरा प्रश्न हम यह करने जाएँगे॥

यह कारण पहले नहीं उपस्थित था क्या ?
क्या भविष्य में भी कहिये नहीं रहेगा ?
था, नहीं, रहेगा नहीं, आज फिर क्यों है ?
प्रश्न तो खड़ा सन्मुख यह ज्यों का त्यों है॥

इसका उत्तर तो हम ही दे सकते हैं।
लेना चाहें वे हमसे ले सकते हैं॥

× × ×

इस जग को, दुख का सागर तुम मत मानो !
है लिये हमारे सुख-स्वरूप पहचानो !!
दुख सागर है ? तो जिया चाहते क्यों हैं ।
सब कार्य हर्ष से, किया चाहते क्यों हैं ।।

क्यों ? बतलाओ ! मरने से भय खाते हैं ।
मृत्यु का नाम सुन कर क्यों घबराते हैं ।।
दुख जहाँ कहीं भी, हमें दीख पाता है ।
उस दुख के तो, हम ही हाँ, निर्माता हैं ।।

वह ईश्वर तो सुख ही सुख वर्षाता है ।
संग्रह न उसे कर मानव दुख पाता है ।।

× × ×

गर्भाशय में जो, जीव रहा करते हैं ।
वे दुख पाते, यों लोग कहा करते हैं ।।
है यह भी झूठी बात, जान कर चलिये ।
सुख में रहता है, जीव, मान कर चलिये ।।

देही रूपी यह, दुर्ग सुरक्षा जिसकी ।
करता रहता है, नित्य बताओ ! किसकी ?
जो जीव, गर्भ में माता के पलता है ।
माता के द्वारा, काम सभी चलता है ।।

किंचित् भी जिसको, क्लेश नहीं होता है ।
खाता, पीता, बढ़ता, सुख से सोता है ।।
हम व्यर्थ कल्पना, करते अपने मन से ।
है दुखी समझ लेते हैं, भोलेपन से ।।

आनंद मुक्ति का, है हाँ इससे बढ़ कर।
उसकी अपेक्षा, चलिये दुख है कह कर॥

× × ×

अधिकांश मतो में, यह पाया जाता है।
मुक्ति से जीव, लौटकर नहीं आता है॥

ब्रह्म में जीव कहते हैं, लय हो जाता।
जीव का नहीं, अस्तित्व है रहने पाता॥

इन सबके सम्मुख, हैं ये प्रश्न हमारे।
तर्कोविवेक से, देकर ध्यान विचारें॥

दो सताएँ तो, एक न बनजा सकती।
है एक, नहीं वह दो बन दिखला सकती॥
समरस होंगे, अस्तित्व कहाँ? दो कैसे!
दे उदाहरण समझाओ! होंगे ऐसे॥

ब्रह्म से निकल, क्या जीव कभी आता है।
जो आता नहीं, कहो कैसे जाता है॥
प्रत्यक्ष है यह, जाना प्रमाण आनेका।
निश्चय है फिर, आना प्रमाण जाने का॥
सीमित कर्मों का फल भी सीमित होगा।
ईश्वर न कभी, इस मत से विचलित होगा॥

लय होने पर, जब जीव-न जीव रहेगा।
अस्तित्व बिना, आनंद कौन भोगेगा॥
मुक्ति से, लाभ क्याहुआ? जीवकोकहिये।
कर कृपा दीजिये उत्तर, मौन न रहिये॥

इसलिए हमारी, यह मान्यता रही है।
मुक्ति से लौटने वाली बात सही है ॥

आनंद जीव को, जितना आवश्यक है।
मिलता है जितना, मिलना आवश्यक है ॥
सर्वज्ञ बने इसमें वह शक्ति नहीं है।
अल्पज्ञ जीव है, अनुपम व्यक्ति नहीं है ॥

बिन देह-इन्द्रियाँ, मन के भी बतलाओ।
अनुभव कैसे कर पाएगा समझाओ?
इसलिए मानना होगा, सबसाधन भी।
जीवों को मिलती देह और हाँ मनभी ॥
वह देह न इस देही के जैसी मानो।
सूक्ष्मातिसूक्ष्म, अनुमान मात्र से जानो ॥

× × ×

उतरोत्तर मानव, नित्य चाहता सुख है !
पर सुख के बदले पाता क्यों यह दुख है?
करता यह नहीं सुकर्म दुःख पाता है।
दुख पाकर भी दुष्कर्म किये जाता है ॥

सुख मिलता है, अन्यों को सुख पहुँचाए।
यह नियम नहीं है, दुख देकर, सुख पाए ॥

जिन-जिन बातों में मानवता विकसित हो।
जिन-जिन कामों में, जीव मात्र का हित हो ॥
उन कामों को शुभ, आप समझ कर चलिये।
हो अहित, उन्हीं को, पाप समझ कर चलिये ॥

मानवता से तो दूर रहा करते हैं।
दानवता से भरपूर रहा करते हैं ॥
यह बतलाओ ! दुष्कर्म नहीं तो क्या है ?
यों रहना कहो ! अधर्म नहीं तो क्या है ??

जो स्वयं चाहते हैं, सुख ही सुख पाना।
दुख सदा चाहते, अन्यों को पहुँचाना ॥
अब बतलाओ ! यह पाप नहीं तो क्या है।
जप करना, व्यर्थ प्रलाप नहीं तो क्या है ॥

जो सदाचार को स्थान नहीं देते हैं।
जो पात्र देख कर, मान नहीं देते हैं ॥
यह कहो ? व्यक्ति का ढोंग नहीं तो क्या है।
यह मात्र भक्ति का ढोंग नहीं तो क्या है ॥

स्तुति और प्रार्थना करते भी जाते हैं।
कर पाप कर्म, घर भरते भी जाते हैं ॥
पर उपासना का नाम नहीं लेते हैं।
व्यवहारिकता से काम नहीं लेते हैं ॥

आस्तिकता को जीवित, किस भाँति रखोगे।
विपरीत कर्म कर, फल कैसे ? न चखोगे ॥
ईश्वरवादी हो तो ? यह बात समझलो।
यह बात बुद्धिमत्ता के साथ समझलो ॥

पर दारा को माता समान समझोगे।
जब सदाचार को आप आन समझोगे ॥
संसार स्वर्ग बन जाएगा फिर निश्चय।
यह मानव भी, सुख पाएगा, फिर निश्चय ॥

सुविचारों को नित चिंतन करना सीखो।
सब जीवों का, हित चिंतन करना सीखो॥
सच्चरित्रता में प्रतिदिन ढलना सीखो।
उत्तमता से हर समय, बदलना सीखो॥

उत्तम ग्रन्थों को पढ़ते रहना सीखो।
सन्मार्ग ग्रहण कर, बढ़ते रहना सीखो॥
सद्विद्या के व्यसनी बन जाना सीखो।
अपने जीवन में ज्योति जगाना सीखो॥

ऋण लिया है जिससे, उसको देना सीखो।
केवल न आप लेना ही लेना सीखो॥
मुखसे न आप कहना ही कहना सीखो।
कह कर उसको, करते भी रहना सीखो॥

केवल न आप, सुनना ही सुनना सीखो।
सुन-सुन कर फिर, दुहरा कर गुणना सीखो॥
सब सीखो पर ? दुर्व्यवहार न करना सीखो।
तुम जग में, अत्याचार न करना सीखो॥

औरों को सुख दोगे तो ? सुख पाओगे।
औरों को दुख दोगे तो ? दुख पाओगे॥
काँटे बोने पर, कभी न आम मिलेगा।
जैसे का वैसा ही, परिणाम मिलेगा॥

इस अटल नियम को, तुम्हें मानना होगा।
ईश्वर करता है न्याय, जानना होगा॥
फल अपने कर्मों के अनुकूल मिलेगा।
यदि फूल लगाओगे तो ? फूल मिलेगा।

उस ईश्वर को इतना कमजोर न समझो ।
मानव के जैसा रिश्वतखोर न समझो ।।
वश हुआ, स्वार्थ के, मानव गिर सकता है ।
पर जगदीश्वर का, नियम न फिर सकता है ।।

यह सच है पापी, प्रथम पनपता जग में ।
अत्याचारी पहले हैं, तपता जग में ।।
अत्याचारी का, अन्तिम दिन आता है ।
तब चार गुणा, इस जग पर छा जाता है ।।

पर पापों का परिणाम बुरा होता है ।
अत्याचारी अंततः पड़ा रोता है ।।
पुण्य के कार्य में, प्रथम कष्ट आते हैं ।
सुख में फिर वे ही, परिणित हो जाते हैं ।।

निर्णय करलो ? क्या पहले सुख पाना है ।
पहले सुख पाकर पीछे पछताना है ।।
या पहले पाकर कष्ट, बाद में सुख हो ।
निश्चय कर लो, जिस ओर आपका रुख हो ।।

उत्तम कर्मों में, कष्ट प्रथम आता है ।
वह कष्ट नहीं ? समझो ! तप कहलाता है ।।
उस तपका, शुभ परिणाम मिला करता है ।
तब आत्म शान्ति, विश्राम मिला करता है ।।

इसलिए आप, तपने तत्पर हो जाओ ।
पहले कष्टों को झेलो औ सुख पाओ ।।
लो समझ, इसे ही आत्म शांति का साधन ।
जनता की सेवा ईश्वर का आराधन ।।

ईश्वर को, तुमसे कोई चाह नहीं है।
तुमसे उसको, मिलता उत्साह नहीं है॥
कर आप प्रशंसा, प्रोत्साहन क्या दोगे ?
परिपूर्ण है उसका तुम क्या भला करोगे॥

उसकी उपासना करके, लाभ उठाओ।
शुभकर्म करो औ मानवता अपनाओ॥
पुरुषार्थ यत्न करके नित करो कमाई।
अपनी भी औरों की भी करो भलाई॥

× × ×

यह मानव है स्वाधीन कर्म करने में।
अर्थात् धर्म करने, अधर्म करने में॥
पर परवश है कर्मों का फल पाने में।
है लाभ इसी तथ्य को समझ जाने में॥

ईश्वर मानव से कर्म न करवाता है।
मानव अपने कर्मों का निर्माता है॥
प्रायः यह मानव, भूल किया करता है।
ईश्वर करवाता, समझ लिया करता है॥

ईश्वर ही हमसे कर्म कराया होता ?
मानव क्यों उसका, फल फिर पाया होता ?
क्या बुरा कर्म भी ? ईश्वर करवाता है।
सिद्धान्त, समझ में यह कैसे आता है॥

ना समझ लोग ऐसी बातें करते हैं।
अपराध स्वयं कर, ईश्वर पर धरते हैं॥
पर कर्म फलों को, प्रतिदिन भोग रहे हैं।
विपरीत बात, फिर ? कह क्यों लोग रहे हैं॥

गुण अवगुण, मानव में रहते आए हैं।
परिणाम उन्हीं के, सब सहते आए हैं॥
जिनमें अवगुण कुछ अधिक रहा करते हैं।
ऐसों को सब ही बुरा कहा करते हैं॥

कमियों का रहना, और बात है जानो।
फिर भी अपनी, उन कमियों को पहचानो॥
बन सके जहाँ तक, उत्तमता अपनाओ।
व्यसनों से हट कर, उन्नति करते जाओ॥

मानव बनकर, नैतिकता अपनाने पर।
अनुशासन में रह, जगमें यश पाने पर।
संसार स्वर्ग बन जाता है सच जानो।
अन्यथा नर्क इस जग को ही है मानो॥

उच्छृंखलता का, जब विकास होता है।
इस मानवता का, वहाँ ह्रास होता है॥
व्यापक फिर अत्याचार हुआ करता है।
घर घर में हाहाकार, हुआ करता है॥

उद्दण्ड युवक, युवतियाँ, जहाँ बन जातीं।
लो समझ, पतन की फिर तो घड़ियाँ आतीं॥
रहता है शेष न, शिष्टाचार जहाँ पर।
सुखशान्ति रहेगी? फिर तो कहो कहाँ पर??

यह नियम हमें, नैसर्गिक बतलाता है।
कुछ दिन में फिर तो, परिवर्तन आता है॥
फिर से नूतन निर्माण, हुआ करता है।
अत्याचारी, निष्प्राण हुआ करता है॥

× × ×

मानव की देही, पाकर भी यह मानव ।
बनकर फिरता है पशु अथवा यह दानव ।।
पशु दानव इसको, कहदें ? लड़ पड़ता है ।
पर मानव बनने के लिए न बढ़ता हैं ।।

अपने अति उत्तम नाम रखा करता है ।
अनुकूल नामके नहीं चला करता ।।
गुण गाएँ इसके लोग, चाहता है यह ।
प्रतिदिन ही अपने को, सराहता है यह ।।

अपनी त्रुटियों को त्रुटि ही नहीं समझता ।
अन्यों की कुटियाँ, सदा ध्यान में रखता ।।
औरों की आलोचना किया करता है ।
अपने दोषों पर, ध्यान नहीं धरता है ।

उपदेश सदा औरोंको ही देता है ।
उपदेश स्वयं का स्वयं नहीं लेता है ।।
औरोंको, बनिये नेक, सदा कहता है ।
पर पाप स्वयं करने तत्पर रहता है ।।

ईश्वर के आगे क्षमा याचना करके ।
धो लेता है पापों को जीवन भर के ।।
अपने को सच्चा भक्त समझता भारी ।
मुक्ति का समझकर, चलता है, अधिकारी ।।

अपने कुकर्म, शुभकर्म दीखते इसको ।
अब समझाएँ तो, समझाएँ भी किसको ।।
पापी होकर भी धर्मवीर बनता है ।
जनता का नेता बना हुआ तनता है ।।

ऐसों से यह संसार भरा है सारा।
हो सकता है, हाँ ? यह ही हाल हमारा ?
हम को भी तो, उनमें से एक समझिये।
उनके जैसा ही हमको नेक समझिये ॥

इस मानव का कुछ भी विश्वास नहीं है।
ह्रास को समझता अपना ह्रास सहीं है ॥
अवनति को, यह उत्थान समझ लेता है।
अपमानों को, सम्मान समझ लेता है ॥

यह एक समय, जिसको संग्रह करता है।
उत्सुकता से लाकर घर में धरता है।
दूसरे समय में, उसे त्याग देता है।
कुछ भी प्रभाव, मन पर न कभी लेता है ॥

विस्तार सहित, इस पर विचार कुछ करिये।
मन से ही, इस मन का सुधार कुछ करिये ॥
करिये प्रयत्न, अंकुश रखने का मन पर।
अच्छा प्रभाव, तब होएगा जीवन पर ॥

उत्तम कामों में, इसे लगाते रहिए।
दुर्गुण से दूर हटा, समझाते रहिये ॥
अच्छी बातों का, आदी बन जाएगा।
तब बुरे काम करने न कभी पाएगा ॥

देते रहिये बस काम, निरन्तर इसको।
मत चढ़ने दीजे, अपने शिर पर इसको।
तो ही कुमार्ग पर, तुम्हें न ले जाएगा।
लो बात समझ, फिर पतन न हो पाएगा ॥

× × ×

विद्या वैभव सम्पत्ति द्रव्य आने पर ।
सत्ता सुन्दरता, शक्ति आदि पाने पर ।।
अति मान, सदा मानव में आ जाता है ।
आने पर फिर यह ठोकर भी खाता है ।

इन सवको पाकर, नम्र वने रहते हैं ।
रख विनय भाव जो मधुर वचन कहते हैं ।।
ऐसे मानव को आदरणीय समझिये ।
आचरण उन्हीं के, अनुकरणीय समझिये ।।

उन्नत होकर भी नहीं फूलते जो हैं ।
पिछले जीवन को, नहीं भूलते जो हैं ।।
ऐसे जो हैं उनको, गंभीर समझिये ।
सुधि दीनों की ले, उनको धीर समझिये ।।

दुखियों के दुख को, देख दुखी होते हैं ।
रोतों को, देख न जो सुख से सोते हैं ।।
जो दुष्ट जनों के, हरते प्राण समझिये ।
उनको क्षत्रिय योद्धा, वलवान समझिये ।।

जो न्याय पूर्वक धन संचय करते हैं ।
जो मेल मिलावट चोरी से डरते हैं ।।
गोरक्षा कृषि वाणिज्य, किया करते हैं ।
है वैश्य वही, जो दान दिया करते हैं ।।

विद्या पढ़ जो, विस्तार किया करते हैं ।
जो सदाचार से प्यार किया करते हैं ।।
उनको ब्राह्मण, विद्वान समझकर चलिए ।
सज्जन, सत्पुरुप, महान समझकर चलिए ।।

जो लिये देश के, त्याग किया करते हैं।
जो जनता से अनुराग किया करते हैं॥
जो भारतीयता के, रक्षक, पोषक हैं।
है देश भक्त, बस वही न जो शोषक हैं॥

हो भारतीय, पश्चिम का दास बना है।
पश्चिम पर ही जिसका, विश्वास घना है॥
उसको भारत माता का भक्त न बोलो।
सन्मान न उसका, करने को मुख खोलो॥

× × ×

कुछ लोग दीखने में ऐसे आते हैं।
दुख पाकर, अन्यों को सुख पहुँचाते हैं॥
दुख पाकर भी, आनन्द लिया करते हैं।
तन मन धन से, उपकार किया करते हैं॥

कुछ लोग, अन्य को सुख भी पहुँचाते हैं।
साथ ही, स्वयं भी सुख पा हर्षाते हैं॥
अन्यों को, सुख दे सुखी सदा रहते हैं।
परमार्थ—स्वार्थ, रख साथ साथ वहते हैं॥

कुछ लोग, यत्न करते हैं जो सुख पाने।
तत्पर रहते, लोगों को दुख पहुँचाने॥
अन्यों के दुख पर, ध्यान नहीं धरते हैं।
दुख देकर, अपना भला किया करते हैं॥

कुछ लोग, दुखी अन्यों को सदा बनाने।
तैयार स्वयं भी होते हैं दुख पाने॥
दुख पाकर भी दुख देना धर्म समझते।
कर्तव्य और इसको शुभ कर्म समझते॥

× × ×

संसार कहो क्या दुखों का सागर है।
क्यों दुःख उठाते फिर ये नारी नर है ?
इसका उत्तर भी ध्यान लगाकर सुनिये।
एकाग्र चित्त हो, कान लगा कर सुनिये॥

वात या वस्तु कुछ भी हो उसका मानव।
करता है दुरुपयोग, जवकि वन दानव॥
दुख का स्वरूप तव उसका वन जाता है।
सुख का अभाव ही, दुख माना जाता है॥

प्रत्येक व्यक्ति जब, दुखों को सहता है।
है किन जन्मों के पाप. यही कहता है॥
जो वर्तमान में पाप किया करता है।
उन पर न कभी वह ध्यान दिया करता है॥

जो है कसाव पशुपधका करता धन्दा।
वह भी वनता है नेक खुदा का वन्दा॥
अपने को पापी वह भी नहीं समझता।
आस्तिक वन कर है, नाम सदा ही भजता॥

वेश्या एवं वेश्यागामी भी जो हैं।
धार्मिक अपने को, सदा समझते वो हैं॥
हमने न किसी का बुरा किया है अब तक।
कहते रहते हैं, वे जीते है तव तक॥

अत्याचारी शासक होता है जो भी।
सत्पुरुष स्वयं को, सदा समझता वो भी॥
मैंने न किया है, कुछ भी वुरा किसी का।
क्या? धार्मिकता है सचमुच नाम इसी का॥

क्या भले बुरे का इनको ज्ञान नहीं है।
क्या पाप पुण्य की, कुछ पहचान नहीं है॥
या तो इनकी है, महा मूर्खता समझो।
या इनकी है, यह महा धूर्तता समझो॥

प्रायः मानव हमने देखे हैं ऐसे।
उनको कहिये समझाया जाये कैसे ?
पापों का फल पा रहे दुःख पाते हैं।
साथ ही फिर भी पाप किये जाते हैं॥

अत्याचारों से, त्राहि त्राहि करते हैं।
कष्टों को पाकर, नित्य आह भरते हैं॥
फिर भी दुर्बल को जहाँ कहीं पाते हैं।
उन पर तो अत्याचार स्वयं ढाते हैं॥

है भला वुरा क्या सद्विवेक से जानों।
है पाप पुण्य क्या भली भाँति पहचानों॥
विन वात विचारे, निर्णय करना छोड़ों।
व्यक्तिगत लाभ का लोभ लिए मत दौड़ो॥

उत्थान देश का हो यह लक्ष बना कर।
सब कुछ करिये, निष्काम भाव अपना कर॥
पर आततायियों पर मत दया दिखाओ।
प्रतिशोध न लेकर नम्र न बनते जाओ॥

हिन्सक की हिन्सा करना पाप नहीं है।
है यही अहिंसा, मरना पाप नहीं है॥
हिन्सा है, निर्बल जीवों का वध करना।
निज उदर पूर्ति कर, पेट मांस से भरना॥

दुष्टों पर करना क्रोध न कभी बुरा है।
लेना ही हो, प्रतिशोध न कभी बुरा है ॥
शठ के प्रति, शठता दिखलाई जाती है।
शठ की शठता में, तभी कमी आती है ॥

वलवान, पात्र को देख क्षमा करता हैं।
कर दया दीन दुखियों का दुख हरता है ॥
सज्जन का देता साथ, शूर वनकर है।
दुष्टों को देता दण्ड, क्रूर वन कर है ॥

है पुण्य कार्य क्या ? समझो समझाते हैं।
निर्णय मनु ने, जो दिया है दर्शाते हैं।
हो जीव मात्र का भला, भलाई वो है।
हो जीव मात्र का बुरा, बुराई वो है ॥

औरों से, अपने लिए चाहते जैसा।
व्यवहार करो ! औरों से तुम भी वैसा ॥
है मानवता बस, समझो नाम इसी का।
तुम बुरा न चाहो, मन से कभी किसी का ॥

पर दारा को तुम, समझ मातृवत् चलिये।
सब जीवों को तुम, समझ भ्रातृवत् चलिये ॥
पर धन को धूल समान मानते रहिये।
ऐसा करने में, पुण्य जानते रहिये।

कर्तव्य कर्म कर, सदा नियम पर चलिये।
नैतिकता में औ अनुशासन में ढलिये ॥
वास्तविक शान्ति, उस ही दिन हो पाएगी।
जनता ये बातें, जिस दिन अपनाएगी ॥

× × ×

मन जाता है कुकर्म में तो जाने दो।
खाता है–गोते तो, इसको खाने दो॥
अपने शरीर पर तुम अधिकार जमा लो।
इन दशों इन्द्रियों पर, जम कर जय पालो॥

मन पर, अपना अधिकार नहीं होता है।
मन से न कभी, कर पाते समझोता है॥
इससे न किसी का अनहित हो पाएगा।
अपनी सीमा में ही यह रह जाएगा॥

मन पर अंकुश रखना, अत्यन्त कठिन है।
इसका चुप रहना, बनकर संत कठिन है॥
बन सके जहाँ तक रोक, विचरने दीजे।
दृढ़ता पूर्वक इन्द्रिय, निग्रह कर लीजे॥

मन से होगी तो, होगी हानि हमारी।
क्या करें, हमारी है यह भी लाचारी॥
पर हानि नहीं अन्यों की हो पाएगी।
मन की मन में, इस मन के रह जाएगी॥

उत्तम कामों में, इसे लगाते रहिये।
उत्तम भावों में, इसे, भगाते रहिये॥
इसको कुछ ना कुछ, रहिये काम बताते।
खाली न बिठा कर, रहिये इसे सताते॥

इसके वश में हो जाना, बहुत बुरा है।
इसके वश हो–खोजना, बहुत बुरा है॥
बन सके जहाँ तक, काम निकालो अपना।
है भला इसी में, इसे बनालो अपना॥

यह शत्रु ओर बन जाता मित्र हमारा।
यदि मित्र बना तो ? देगा वहुत सहारा॥
लो, जो भी चाहे बना, हाथ अपने हैं।
कुछ दूर नहीं, यह सदा साथ अपने हैं॥

× × ×

कर यत्न देख लो ? दूर नहीं जाना है।
परिपूर्ण रूप से, दुष्कर जय पाना है॥
पर अपना बन जाता, अभ्यास किये से।
दृढता पूर्वक, अपना विश्वास किये से॥

अत्यन्त कठिन है, सत्य बात को कहना।
अत्यन्त कठिन है, सत्य बात को सहना॥
अत्यन्त कठिन है, सच्चाई पर चलना।
अत्यन्त कठिन है, सच्चाई में ढलना॥

अत्यन्त कठिन है, सदाचार अपनाना।
अत्यन्त कठिन है, करके त्याग दिखाना॥
अत्यन्त कठिन है, नैतिकता का जीवन।
अत्यन्त कठिन है, रखना हाँ ? अनुशासन।

अत्यन्त कठिन है, जग में आस्तिक बनना।
अत्यन्त कठिन है, मनुज वास्तविक बनना॥
अत्यन्त कठिन है, सद्गुण धारण करना।
अत्यन्त कठिन है, पर दुख वारण करना॥

अत्यन्त कठिन है, पापकर्म से बचना।
अत्यन्त कठिन है, करें धर्म की रचना॥
अत्यन्त कठिन है, मन का वश में होना।
अत्यन्त कठिन है, वीज धर्म के बोना।

अत्यन्त कठिन है, अपनी भूल समझना।
अत्यन्त कठिन है, उसे स्वयं ही तजना॥
अत्यन्त कठिन है, स्वजनों को समझाना।
अत्यन्त कठिन है, अपने पर जय पाना॥

अत्यन्त कठिन है, सन्तानों पर शासन।
अत्यन्त कठिन है, आचरणों सम भाषण॥
अत्यन्त कठिन है, दुर्व्यसनों से हटना।
अत्यन्त कठिन है, न्याय नीति पर डटना॥

अत्यन्त कठिन है, इन्द्रिय निग्रह करना।
अत्यन्त कठिन है, सद्भावों को भरना॥
अत्यन्त कठिन है, आत्म निरिक्षण करना।
अत्यन्त कठिन है, शुद्ध आचरण करना॥

× × ×

जिन-जिन कामों में, जीवमात्र का हित हो।
जिन कामों में, मानव जीवन विकसित हो॥
जिन कामों में, उपकार हुआ करता हो।
सच्चरित्र का, विस्तार हुआ करता हो॥

उन सब कामों को, यज्ञ मान कर चलिये।
कर्ता का जीवन, सफल जान कर चलिये॥

तन-मन-धन से, उपकार करा करते हैं?
मन में हर दम, सुविचार भरा करते हैं॥
जनता के हित में, जीवन करते अर्पण।
अर्थात् है करते, जो सर्वस्व समर्पण॥

उनका जीवन, यज्ञमय मान कर चलिये।
प्रत्यक्ष देवता, उन्हें जान कर चलिये॥

हिंसा चोरी औ दुराचार में रत हैं।
मानो ! उनके जीवन का, यह ही व्रत है ॥
सीधा चलना, जिनको है नहीं सुहाता।
अन्यों को, दुख पहुँचा कर जो हर्षाता ॥

ऐसों को हर दम, असुर मान कर चलिये।
अधमाधम उनको, पतित जान कर चलिये ॥

घृत, हव्य, आदि अग्नि में, डालते जो हैं।
वायु को, शुद्ध कर, स्वच्छ बनाने को हैं ॥
इससे महान, उपकार हुआ करता है।
सुखमय इससे, संसार हुआ करता है ॥

इसलिए इसे भी, यज्ञमान कर चलिये।
सबको पहुँचेगा, लाभ जान कर चलिये ॥

× × ×

है सरल, किसी के पीछे दोष लगाना।
आलोचक बन करके, आँखें दिखलाना ॥
पर सन्मुख दोष दिखाना, सरल नहीं है।
सन्मुख उसके डट जाना, सरल नहीं है ॥

है सरल शत्रु बनने पर, बुरा बताना।
सब छुपी हुई कमियाँ, उसको बतलाना ॥
पर मित्र रहे तक, कहना सरल नहीं है।
कह फेर मित्र बन रहना, सरल नहीं है ॥

जब किसी व्यक्ति से, स्वार्थ सिद्ध होता है।
चलना पड़ता तब ? करके समझौता है ॥

उसके दोषों को, दिखलाना दुष्कर है।
सच कहकर वैरी बनजाना दुष्कर है॥

है सरल स्वयं की, सदा बड़ाई करना।
औ विपक्षियों के साथ, लड़ाई करना॥
अपने वालों से, लड़ना सरल नहीं है।
ले पक्ष न्याय का, अड़ना सरल नहीं है॥

है सरल भक्ति का मात्र, ढोंग दिखलाना।
है सरल नाच कर, ईश्वर के गुण गाना॥
पर आस्तिक बन कर चलना, सरल नहीं है।
मानवता में भी ढलना, सरल नहीं है॥

है सरल सदा ही, पर उपदेश सुनाना।
सद्भाव सहित, सबको सन्मार्ग सुझाना॥
पर स्वयं क्रिया में, लाना सरल नहीं है।
कहकर उसमें, ढल जाना सरल नहीं है॥

सच समझो, है यह, मानव की दुर्बलता।
कहता है उस पर स्वयं नहीं है चलता॥
धर्म की दुहाई, सदा दिया करता है!
विपरीत आचरण, स्वयं किया करता है॥

इस दुर्बलता को, दूर हटाते रहिये।
अपने दोषों को, सदा घटाते रहिये॥
अभ्यास आप! यदि यों करते जाओगे।
निश्चय ही, फिर तो, उन्नति कर पाओगे॥

जिस समय, सत्य से मानव हट जाता है।
अर्थात् झूठ को, लेकर डट जाता है॥
झगड़ा होता आरंभ, तभी सच जानो।
क्या छुपा तथ्य हैं, उसे आप पहचानो॥

यदि उभय वक्ष, स्वीकार सत्य को कर लें।
सद्भाव सहित, सुविचार हृदय में भर लें॥
तो कभीं नहीं संघर्ष, खड़ा ओएगा ?
फिर क्यों न भला ? मानव, सुखसे सोएगा ?

× × ×

इस मानव को, लगती न देर गिरने में।
आगे बढ़जाकर, फिर पीछे फिरने में॥
यह काम कभी, अति उत्तम कर जाता है।
अति अधम काम भी, करके दिखलाता है॥

इसके प्रति कुछ भी, कहना ही दुष्कर है।
बिन कहे कभी, चुप रहना ही दुष्कर है॥
इसका अपना, कोई आधार नहीं है।
इसकी लीला का, कुछ भी पार नहीं है॥

× × ×

आकर दबाव में, देना दान सरल है।
आकर प्रभाव में, देना दान सरल है॥
कर्त्तव्य समझ, निष्काम भाव से देना।
अत्यन्त कठिन है, मन को समझा लेना॥

यदि देख पात्रता, दान दिया जाता है।
सत्पुरुषों को, सम्मान दिया जाता है॥
मानवता उभरा करती सदा वहाँ पर।
दानवता, बिसरा करती सदा वहाँ पर॥

दुर्जन पाते हो ? नित सम्मान जहाँ पर ।
अति, अनावृष्टि, होती है सदा वहाँ पर ॥
मनु ने, इस कारण से ही जतलाया है ।
कर स्पष्ट घोषणा हमको बतलाया है ॥

उत्तम खेती में खाद व्यक्ति जो देगा ।
उत्तम बोएगा बीज, सुफल वह लेगा ॥
क्यों सुखी न होगा, वह किसान बतलाओ ?
नैसर्गिक, नियमों को, समझो ? समझाओ !

विपरीत करोगे ? कर्म, कुफल पाओगे ।
हो दुखी ! अन्य को भी, दुख पहुँचाओगे ॥
क्यों नहीं कहो ! फिर, जगमें पाप बढ़ेगा ।
वह पाप आपके, शिर पर क्यों न चढ़ेगा ॥

पापी का जो सहयोग, दिया करते हैं ।
चाहे वे पाप न स्वयं किया करते हैं ॥
वे भी पापी की श्रेणी में आएँगे ।
सहयोग दिये का, वे भी फल पाएँगे ॥

दे वचन व्यक्ति जो, नट जाया करते हैं ।
लोभी बन पीछे, हट जाया करते हैं ॥
निश्चय वे अपयश के, भागी होते हैं ।
केवल जो धन के, अनुरागी होते हैं ॥

धन रहने पर, जो देता दान नहीं है ।
सत्पुरुषों का, करता सन्मान नहीं है ॥
दातृत्वहीन को, दीन जान कर चलिये ।
धन का चपरासी, उसे मान कर चलिये ॥

धन के रहने पर, कृपण बनोगे तो फिर ?
बन कर दातार, नहीं कुछ दोगे तौ फिर ?
बदनामी होगी, जिससे दुखी रहोगे।
दातार बने पर ही तुम सुखी रहोगे ॥

धन के न रहे पर, यदि दातार बनोगे।
तो अपने ही ऊपर तुम भार बनोगे ॥
जीवन में फिर तो, कभी न सुख पाओगे।
अपव्यय करके, निश्चय ही दुख पाओगे ॥

सुगुणों से तुम, जितने भरपूर रहोगे।
दुर्व्यसनों से, जितने ही दूर रहोगे ॥
सच समझो, तुम ! उतने ही सुखी रहोगे।
विपरीत चले तो, निश्चय दुखी रहोगे ॥

आवश्यकताएँ, जितनी बढ़ा रखोगे।
टेवों को जितने, शिर पर चढ़ा रखोगे ॥
आदत बिगाड़ कर उतने दुखी रहोगे।
इनसे बच पाए तो ही, सुखी रहोगे ॥

नैसर्गिक होती हैं ? आवश्यकताएँ।
सब जान रहे, हम कहाँ तलक बतलाएँ ॥
उनकी तो पूर्ति करें, यह आवश्यक है।
करना पड़ता, हो सकता जहाँ तलक है ॥

पर कई निरर्थक, लोग बढ़ा लेते हैं।
शिर पर हाथों से, स्वयं चढ़ा लेते हैं ॥
अभ्यास बढ़ा कर, बन जाते हैं आदी।
तन की एवं धन की, करते बरबादी ॥

× × ×

प्रत्येक भाँति का, लाभ हो जिन कामों से।
परिचित हो लो, कामों के परिणामों से ॥
उन कामों को, करने में समय लगाओ।
धन को व्यय कर, तन से भी कष्ट उठाओ ॥

हो सामाजिक उत्थान, राष्ट्र का हित हो।
प्रत्येक भाँति से, जो-जो काम उचित हो ॥
उन कामों को, निश्चय ही करना चहिये।
प्रांगण में निर्भय बने, उतरना चहिये ॥

उत्तम कामों में कष्टों को, तप समझो।
उत्तम शब्दों को, कहने में जप समझो ॥
शुभ आचरणों को, तीर्थ-यात्रा जानो।
जन सेवा को, ईश्वर की पूजा मानो ॥

जड़ जग का कर उपयोग, काम में लाओ।
जीवों की सेवा जितनी हो? कर जाओ ॥
ईश्वर की, नित उपासना करते जाओ।
उत्तम विचार, नित मन में भरते जाओ ॥

× × ×

इन चमत्कारियों को, महत्व मत दीजे।
हाँ सदाचारियों को, सन्मानित कीजे ॥
नित धूर्त चमत्कारों से, लाभ उठाते।
लोगों को मूर्ख बना कर, ठग कर खाते ॥

आश्चर्यजनक कुछ, कौतुक कर जाते हैं।
साधारण जन, फिर उनसे डर जाते हैं ॥
अपनी सब पर वे, धाक जमाते जाते।
चक्कर में लाते, द्रव्य कमाते, जाते ॥

रावण रखता था चमत्कार अपने में।
राघव रखते थे, सदाचार अपने में॥
गुण सदाचार का है, न अजी ! साधारण।
पूजे जाते जन, सदाचार के कारण॥

मत चमत्कारियों के, फँसिये फन्दे में।
घाटा ही घाटा रहता, इस धन्दे में॥
है महा पाप, समझो ? यों धोखा खाना।
इसलिए दूर ही रहना, निकट न जाना॥

विद्या पढ़ कर, विद्वान् कहाना चहिये।
सदगुण धारण करके, दिखलाना चहिये॥
व्यवहार कुशल, बन जाना आवश्यक है।
सच्चरित्रता, अपनाना आवश्यक है॥

विद्या पढ़, मानवता को, विकसित करना।
अपना एवं जनता का भी, हित करना॥
फिर हानि किसी को, कभी नहीं पहुँचाना।
तज अकर्मण्यता, उन्नति कर दिखलाना॥

विद्या पढ़ कर, जो घमण्ड में आते हैं।
निश्चय समझो ! वे मानव गिर जाते हैं॥
वे हानि स्वयं को, अन्यों को पहुँचाते।
अंततः एक दिन, निश्चय ही पछताते।

विद्या के पढ़ते हुए, पाठ यह पढ़िये।
शिष्टता और सुविचार धार कर बढ़िये॥
विद्या जग में, बदनाम नहीं हो पाए।
अपने हाथों ? वह ? काम नहीं हो पाए॥

ऐसा मनमें जो, ध्यान रखा करते हैं।
प्रति विद्या के, सन्मान रखा करते हैं॥
विद्वान्, वास्तविक में – विद्वान् वही है।
मानव की रखते, जग में आन वही है॥

मूर्ख से अधिक, विद्वान् हानि करते हैं।
बन धूर्त. नहीं जब, जग से वे डरते हैं॥
हो जाता है फिर, कठिन उन्हें समझाना।
जो रहे जागता, क्योंकर? उसे जगाना॥

× × ×

उत्तम पुरुषों के संग, सदा ही रहकर।
दृढ़तापूर्वक, सब ही कष्टों को सहकर॥
विपरीत कर्म करके, न दिखाना चहिये।
ऐसा अपना, अभ्यास बनाना चहिये॥

दैवत्व रखा करते जो, अपने मन में।
अपने स्तर से, गिरते न कभी जीवन में॥
मन कर्मवचन में, लाते कभी न अन्तर।
वे अपनी आन निभाते हैं, जीवन भर॥

धन गया, नहीं कुछ गया, जान चलते हैं।
यदि स्वास्थ्य गया, कुछ गया, मान चलते हैं॥
पर नहीं चाहते, वे चरित्र को खोना।
इसको खो कर, पड़ता जीवन भर रोना॥

धन गया हुआ, फिर वापिस, आ सकता है।
कर यत्न स्वास्थ्य को, लाया जा सकता है॥

पर गया हुआ, सच्चरित्र नहीं आ सकता ।
उसको न कभी भी, लौटाया जा सकता ॥

जो मानव, इस सत्य को, समझ जाते हैं ।
वे जीवन के तथ्य को, समझ जाते हैं ॥
वे शरीर से तो, निश्चय मर जाते हैं ।
अमरत्व प्राप्त, यश द्वारा कर जाते हैं ॥

प्रत्येक व्यक्ति को, यही चाहिये करना ।
होवे चरित्र निर्माण, भाव वे भरना ॥
आदर्श राम-सीता का, सन्मुख रखना ।
करके सुकर्म, उसका उत्तम फल चखना ॥

× × ×

संघर्षों में जो, जाति जिया करती है ।
जो विरोधियों पर, विजय किया करती है ॥
है जग में रहने का, अधिकार उसी को ।
आगे बढ़ने देता, संसार उसी को ॥

जो स्वाभिमान की, रक्षा कर सकती है ।
जीवित रहने को, जो भी मर सकती है ॥
वह जाति जगत में, आगे बढ़ जाती है ।
वह सदा शत्रु के, शिर पर चढ़ जाती है ॥

जो जाति संगठित, सदा रहा करती है ।
संकट जो आए, उन्हें सहा करती है ॥
उसकी अविचल धारा, न रुका करती है ।
आगे न किसी के, कभी झुका करती है ॥

अपने भविष्य का, ध्यान सदा रखती है।
जो वर्तमान में आन, सदा रखती है॥
जो भूत काल को, सम्मुख रख चलती है।
वह जाति सदा, उन्नति करके फलती है॥

अनुकूल समय के, परिवर्तन लाती है।
वह जाति जगत में, मिट न कभी पाती है॥
अपनी भूलों का, जो सुधार करती है।
अपनी कमियों पर, जो विचार करती है॥

जो जाति अन्य को, सदा पचा लेती है।
गिरने वालों को, उठा बचा लेती है॥
वह जाति जगत में, जीवित कहलाती है।
उन्नति भी करके, वह ही दिखलाती है॥

वे, बुरे नहीं है, हमें सताते जो हैं।
जाते हैं सताए, व्यक्ति बुरे तो वो हैं॥
अत्याचारों को, सदा सहा करती है।
वह जाति, बिना मृत्यु के मरा करती है॥

संग्राम, समर में, जो उतरा करती है।
विजयी बनने को, जो उभरा करती है॥
वह जाति जगत में, सदा सुयश पाती है।
इतिहास, अमर अपना वह कर जाती है॥

× × ×

जो शत्रु हानि, पहुँचाता है बाहर का।
उससे बढ़ कर पहुँचाता, अपने घर का॥
उससे बढ़ कर हम अपने ही हाथों से।
बन मूर्ख हानि करते, अपनी बातों से॥

नादान दोस्त भी कुछ होते हैं ऐसे।
कर जाते उल्टे काम, शत्रु के जैसे ।।

दिखने में तो वे साथ दिया करते हैं।
पर, सदा शत्रु का भला किया करते हैं ।।
भगवान् बचाए, हमको इन मित्रों से ।
हानियाँ हुआ करती हैं, जिन मित्रों से ।।

कर काम सफल, मानव जब हो जाता है।
तब बुद्धिमान, निश्चय वह कहलाता है ।।
वरदान सफलता, कहलाती आई है।
हो जाते उनके, सबही अनुयाई है।

जो संघर्षों में, व्यक्ति हार जाता है।
निश्चय ही, वह तो नहीं मान पाता है ।।
अभिशाप, कार्य सब, उसके बन जाते हैं।
उसके न सहायक, कोई दिख पाते हैं ।।

हमने भी कुछ मानव, देखें हैं ऐसे।
ले करके, उनका नाम बताएँ कैसे ।।
है बुद्धिमान विद्वान्, गुणों के सागर।
पर सफल न हो पाये, वे तो जीवन भर ।।

जब दिया, भाग्य ने साथ नहीं है इनका।
ये चमक न पाये दोष कहें, अब किनका ।।
इनको अयोग्य क्या ? कोई कह सकते हैं।
ऐंसे मानव क्या ? पीछे रह सकते हैं ।।

है भाग्यविधाता का तो खेल निराला।
यश अपयश का है, यह ही देने वाला॥
मानव स्वतन्त्र है, मात्र कर्म करने में।
धर्म के कार्य, अथवा अधर्म करने॥

फल जो भी मिले, सहन कर लेते चलिये।
बस ध्यान आप कर्मों पर देते चलिए॥
कर वर्तमान में उत्तम कर्म दिखाना।
फल जो भी मिले, न फिर उससे घबराना॥

सब कर्म फलों को छोड़ो, उस ईश्वर पर
साहस न हार कर, रहो कर्म पर निर्भर॥
जो होना होता ? होकर रह जाता है।
प्रत्येक व्यक्ति कर्मों का फल पाता है॥



यह स्वतंन्त्रता, वरदान नहीं बन पाई।
हाँ, बनकर यह, अभिशाप सामने आई॥
आश्चर्य न करिये, मैं यह सिद्ध करूँगा॥
प्रत्यक्ष प्रमाण, सामने अभी धरूँगा॥

अंग्रेज गए ? अंग्रेजीयत बाकी है।
लो देख ? दशा, कैसी क्या ? जनता की है ?
युवकों व युवतियों का, जो वेश बना है।
यह बतलाओ ? कैसा क्या देश बना है॥

छा रही देश में है, अंग्रेजी भाषा ।
देशी भाषाओं का, हो रहा तमाशा ।।
रीतियाँ, नीतियाँ पश्चिम की छाई है ।
दासता उन्हीं की सबके मन भाई है ।।

भारत ने अब, मस्तिष्क बेच डाला ।
अब आगे ? सोचो ! क्या होने वाला है ।।
अब देशभक्ति का, कुछ भी महत्व नहीं है ।
नैतिकता अब जनता में नहीं रही है ।।

क्या दीख रहा है ? कहो कहीं अनुशासन ?
अब सदाचार का, डोल रहा है आसन ।।
वस्तुएँ देश की हमें पसन्द नहीं है ।।
फारन के बिन आता आनन्द नहीं है ।

इस पर कितनी हो रही चोर बाजारी ।
कर रहे पाप ये सारे ही नर नारी ।।
ऐसा विचित्र कुछ, वातावरण बना है ।
उल्टाही सबका अब आचरण बना है ।।

× × ×

इस अंग्रेजी भाषा के माध्यम द्वारा ।
बदला चाहा जिसने मस्तिष्क हमारा ।।
वह मेकाले तो सफल नहीं हो पाया ।
पर आज काम कर गई है उसकी माया ।।

हो गया सफल अभियान चलाया जो था ।
हाँ, बुद्धिमान वास्तविक में मानव वो था ।।
बोया जो उसने बीज वृक्ष बन पाया ।
देखलो ! काम कर गई है उसकी माया ।।

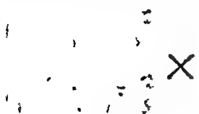
बन रहे आज सब चेले, मेकाले के ।
उसके चरणों में शिर अपने सब टेके ।।
हो गया देश का ही, मस्तिष्क पराया ।
धर हमें दबाई, मेकाले की माया ।।

हम थे गुलाम, उस समय किन्तु जीवन था ?
स्वाधीन आत्मा, बुद्धि और यह मन था ।।
होकर स्वतन्त्र, दासत्व आज अपनाया ।
कर गई काम यह मेकाले की माया ।।

स्वाधीन देश होते ही सत्ता पाकर ।
था एक व्यक्ति जिसने सबको बहका कर ।।
अंग्रेजीयत का था, वर्चस्व बढ़ाया ।
यो काम कर गई मेकाले की माया ।।

अब स्वाभिमान, मर गया देश वालों का ।
यह हाल हो गया भारत के लालों का ।।
अंग्रेजी पन है अब सबके मन भाया ।
यह काम कर गई मेकाले की माया ।।

रीतियाँ नीतियाँ संस्कृति, अपनी खोकर ।
भारत तो अब बैठा है, नंगा होकर ।।
हाथों से ऐसा वातावरण बनाया ।
चहुँ दिशि छाई है, मेकाले की माया ।।

इन सब में बस, ऐसी भावना जगी है ।
फैशन की, अब आपस में दौड़ लगी है ॥
सीता बनने का, इनको ध्यान नहीं है ।
सच्चरित्रता को मन में स्थान नहीं है ॥

वतलाओ ! यह सब, पतन नहीं तो क्या है ।
पर उन्नति इसको ही, सबने समझा है ॥
सच्चरित्रता के, प्रति कुछ श्रद्धा हो तो ।
आदर्श सामने, यदि यह रक्खा हो तो ॥

तो वैसा ही, परिवर्तन लाना होगा ।
अभिमान, देश का पुनः जगाना होगा ॥
सह-शिक्षा की पद्धति, हटवाना होगा ।
सच्चरित्रता का, महत्व दिखाना होगा ॥

सारी बुराइयों को निकालना होगा ।
अच्छे ढाँचे में, इन्हें ढालना होगा ॥

× × ×

हम सभ्य नागरिक, अभी नहीं बन पाए ।
व्यवहारिकता को भी, न अभी अपनाए ॥
करते न कभी भी, अपने काम समय पर ।
स्वाधीन बने, पर आया अभी न अन्तर ॥

हो जहाँ बैठना ? नहीं बैठते हम हैं ।
निश्चित न हमारा, अब तक कोई क्रम है ॥
हम हाथ पकड़, सड़कों के बीच चलेंगे ।
ढाँचे में असभ्यता के, सदा ढलेंगे ॥

ज़र्दा व पान, खा सड़कों पर थूकेंगे।
बस में बैठे, सिगरेटों को फूकेंगे॥
क्यू बना कभी, बस में भी नहीं चढ़ेंगे।
धक्का मुक्की कर, आगे सदा बढ़ेंगे।

चाहिए एक लोटा जल, हमें जहाँ पर।
हम घड़े अजी! दस, देंगे बहा वहाँ पर॥
सम्पत्ति राष्ट्र की, यों ही नष्ट करेंगे।
नल बन्द करें, इतना-ना कष्ट करेंगे॥

फल खाकर, छिलके सड़कों पर फेकेंगे।
ये नहीं किसी का, बुरा भला देखेंगे॥
बन सके जहाँ तक, बस का टिकट न लेंगे।
लो टिकट कहे पर, उससे ये झकड़ेंगे॥

ये अंग्रेजों की, भोंडी नकल करेंगे।
पर देशभक्ति, उन-सी खुद में न भरेंगे॥
ये परदादा के सँग में, डाँस करेंगे।
उन जैसा आपस में, रोमांस करेंगे॥

× × ×

पशु हिंसा को तो, धर्म मान रक्खा है।
व्यसनों को देकर, सदा स्थान रक्खा है॥
विषयों में रहना लिप्त, धर्म माना है।
करना अनीतियों को, सुकर्म माना है॥

सभ्यता, नाम दे रक्खा इन कामों को।
हम बुरा समझते थे, जिन जिन कामों को॥
इस मानव में, देखी यह दुर्बलता है।
ली, पकड़ बात, उसको न छोड़ चलता है॥

तुम लक्ष भ्रष्ट होकर, घूमोगे जब तक।
उन्नत न कभी भी, हो पाओगे तब तक॥
बदनाम जगत में, हो कर आप रहोगे।
हट मानवता से, करते पाप रहोगे॥

सम्मान राष्ट्र का, यदि तुम नहीं करोगे।
विद्रोह देश से, करने नहीं डरोगे॥
तो देश आपका, फिर कैसे सुधरेगा।
फिर कौन व्यक्ति, आकर उद्धार करेगा ?

अपने ही सुख का, यदि तुम ध्यान रखोगे।
फिर कहो ! देश की, कैसे आन रखोगे॥
कैसे विकास होएगा, मानवता का।
कैसे विनाश होएगा, दानवता का॥

भारत की जय कह, प्रेम जताते तुम हो।
पर आचरणों में, उल्टे जाते तुम हो॥
फिर कैसे ? कहिये ! परिवर्तन आएगा।
कैसे भारत उन्नत पथ पर जाएगा॥

स्वाधीन देश के सभ्य नागरिक तुम हो।
सुन बात हमारी, हो जाते गुमसुम हो॥
ऐसा करने से क्या होगा बतलाओ।
अपने को बदलो, परिवर्तन ले आओ॥

हो गया है अब, शिक्षा का ढंग निराला।
बन रहा आज क्या ? देखो पढ़ने वाला॥
युवककौर युवतियाँ, कालेजों में जो जो।
सँग में पढ़ कर, स्वच्छंद बन रहे वो तो॥

सद्शिक्षा का उन पर, न दबाव रहा है।
माता व पिता का भी न प्रभाव रहा है॥
प्रत्येक युवक, हीरो बनने जाता है।
अनुकरण उन्हीं का, करके दिखलाता है॥

आदर्श राम का, नहीं सामने अब है।
अब तो बस, देवानन्द, बन रहे सब है॥
जानीवाकर, कोई वनता है खन्ना।
है बात झूठ या ? सत्य बोलिये अन्ना॥

ये सड़क छाप हीरो हीरोइन सारे।
इनके आगे, झुकते हैं शीश हमारे॥
नूतन प्रकार के, डांस किया करते हैं।
ये अंग अंग मटका, आहें भरते हैं॥

पर दुरुष पराई नारी, डाले बाहें।
रोमांसिक अभिनय करते, भरते आहें॥
यों दुराचार में, सभी व्यस्त रहते हैं।
पीकर शराब मस्त ही, मस्त रहते हैं॥

युवतियाँ हीरोइन बनने को तत्पर है।
इनमें भी उज्छृंखलता करली घर है॥
कोई बनना, चाहती है यह मधुबाला।
माला सिन्हा, कोई वैजन्तीमाला॥

कोई आशा, बनने की रखती आशा।
रखती है राखी, बनने की अभिलाषा॥
श्यामा के जैसी, कटिग करवाती है।
कोई हेमामालिनि, बनने जाती है॥

शासन कर्ता है, सत्य अहिंसा वादी।
तन पर रहती है, शुद्ध सदा ही खादी ॥
पर तीस सहस्र, गाय प्रतिदिन कटती है।
जिव्हा गाँधी का नाम, नित्य रटती है ॥

प्रतिदिन बहती है नदियाँ भी मदिरा की।
पीते हैं शासक स्वयं, रहा क्या बाकी ?

× × ×

सारी जनता का मूढ़ बदल डाला है।
आगई सभी के हाथों में हाला है।
जाने कैसा इतिहास लिखा जाएगा।
क्या जाने भारत स्थान कहाँ ? पाएगा ॥

अभ्यास गुलामी का जब हो जाता है।
उसमें भी सचमुच बड़ा मज़ा आता है।
जैसे भारत को आज आ रहा देखो।
दिन-पर-दिन यह किस ओर जारहा देखो ॥

अंग्रेजों से अंघर्ष किया जय पाया।
जिस भाँति बना, भारत से उन्हें भगाया ॥
अंग्रेज समन्दर के हो, पार गया है।
विजयी भारत, हाथों से हार गया है ॥

अंग्रेज गये फिर भी है, जीत उन्हीं की।
सभ्यता उन्हीं की. है सब रीति उन्हीं की ॥
अंग्रेजीपन, भारत में अब छाया है।
स्वाधीन मात्र, इस भारत की काया है।

स्वाधीन कहाकर भी, गुलाम उनके हैं।
आते पसन्द, हर समय काम उनके हैं॥
बन गये मानसिक दास, देख लो सारे।
रह सके नहीं, स्वाधीन विचार हमारे॥

थी शारीरिक दासता, बुरी ना इतनी।
मानसिक दासता, आज बुरी है जितनी॥
जो बना मानसिक दास, न सुनता वो है।
अपनी स्थिति पर, शिर कभी न धुनता वो है॥

आत्माभिमान, उसका न जाग पाता है।
मूर्च्छावस्था में ही, वह मर जाता है॥
दासत्वभाव का, भान नहीं होता है।
गिर जाने का अनुमान, नहीं होता है॥

कारणवश, यदि कोई गुलाम बनता है।
है बुरा नहीं, उतना कि काम बनता है॥
पर बनता है, निष्काम गुलाम मनुज जो।
फिर तो कैसे ? समझाया जाए, उसको॥

कर आत्म समर्पण, भारत दास बना है।
उत्थान समझकर, इसमें ही अपना है॥

× × ×

भारत वालों ! जब तलक न तुम बदलोगे।
उच्छृंखल बन, उल्टी ही चाल चलोगे॥
निश्चय समझो ? उत्थान न तब तक होगा।
जब तक सम्मुख, आदर्श महान् न होगा॥

फिर, भली बुरी पर ध्यान नहीं धरता है।
सत्य को शीघ्र, स्वीकार नहीं करता है॥
जिन टेवों का अभ्यासी, हो जाता है।
कर आत्म समर्पण, उनमें खो जाता है॥

स्वीकार इसे है, सब कुछ हानि उठाना।
स्वीकार नहीं है, उन्हें छोड़ दिखलाना॥
यदि साहस कर, कोई आगे आता है।
वह तो बस, कठिनाई में पड़ जाता है॥

रह जाता है बस, वह तो व्यक्ति अकेला।
बन कर वह तो बस दयानन्द का चेला॥
अच्छा मानव, बन जाना बहुत कठिन है।
पापों से, बच दिखलाना, बहुत कठिन है॥

है कठिन बहुत बन भला, बुरों में रहना।
कितने संकट पड़ते हैं? सोचो सहना॥
जग का जब वातावरण, बिगड़ जाता है।
मानव फिर उसमें, नहीं सम्हल पाता है॥

फिर हो जाता है, विवश उसी में रहने।
तैयार कौन होगा? कष्टों को सहने॥

× × ×

चन्द्रमा लोक में, मानव को पहुँचाया।
वास्तव में तुमने ! चमत्कार दिखलाया ॥
और भी बहुत से, कौतुक कर दिखलाए।
पर मानव को, मानव न बनाने पाए ॥

एटमबम जैसा, शस्त्र बनाया तुमने।
आश्चर्यजनक, कर काम दिखाया तुमने ॥
कर नाना विधि के, आविष्कार दिखाये।
पर मानव को, मानव न बनाने पाये ॥

मानव के शब्दों की, ध्वनि को भी पकड़ा।
रेडियो, टेलिविजन में, ला करके जकड़ा ॥
कृत्रिम गर्भाशय, तुमने पृथक बनाये।
पर मानव को, मानव न बनाने पाये ॥

अधिकार किया, जल-थल व अग्नि औ नभ पर।
पाँचों तत्वों के, बने हुए इन सब पर ॥
तन मन धन जीवन, इन पर सभी लगाए।
पर मानव को, मानव न बनाने पाए ॥

मछली के जैसे, जल में रहना सीखा।
नभ में उड़ना, जा थल में रहना सीखा ॥
कर योग्य, प्रशंसा के, ये काम बताये।
पर मानव को, मानव न बनाने पाये ॥

मानव के चित्र उतारा, उसे नचाया।
बिन वाणी के, उच्चारण शब्द कराया ॥
लोगों ने देखा, सब के मन को भाये।
पर मानव को मानव न बनाने पाये ॥

जड़ जग को ही तुमने, सब कुछ है जाना।
जड़ जग का ही करना विकास है ठाना ॥
जड़ जग की उन्नति करके सुयश कमाये।
पर मानव को मानव न बनाने पाये ॥

जीवों के प्रति तुमने कुछ भी न विचारा।
इसलिए अधूरा है, विज्ञान तुम्हारा ॥
भौतिक उन्नति का, केवल भाव वसाये।
पर मानव को मानव न बनाने पाये ॥

जीवों की हिंसा, की तुमने मनचाही।
इन मूक प्राणियों पर, न दया दिखलाई ॥
इस जग में तुमने, अद्भुत खेल रचाये।
पर मानव को, मानव न बनाने पाये ॥

अनथक श्रम करके, बड़ी जान मारी की।
ईश्वर सम्बन्धी, नहीं जानकारी की ॥
मनमाने अपने, तन को खूब सजाए।
पर मानव को मानव न बनाने पाए ॥



कर कृपा कीजिए, प्रभो ! शान्ति त्रिभुवन में।

जल में, थल में, इस नभ में, और गगन में।
औ अन्तरिक्ष में एवं अग्नि पवन में॥
वृक्षों में, औषधियों में, वन उपवन में।
पक्षियों और पशुओं में, जड़ चेतन में॥ कर कृपा॥१॥

ब्राह्मण, वक्ताओं के, उपदेश वचन में।
क्षत्रिय, योद्धाओं के द्वारा हो रण में॥
हो वैश्य जनों के, द्रव्योपार्जन धन में।
शूद्रों के हो प्रभु शान्ति सदा जीवन में॥ कर कृपा॥२॥

हो शान्ति राष्ट्रों के निर्माण सृजन में।
हो नगर डगर में, ग्रामों और भवन में॥
हो सभी प्राणियों के, तन में औ मन में।
हो शान्ति प्रकृति के छुपे हुए कण-कण में॥ कर कृपा॥३॥



"श्री रामचरित – दर्पण"

वाल्मीकि-रामायण का संक्षिप्त

पद्यानुवाद



रचयिता :

पं. मुन्नालाल मिश्र
१२-१-३३, प्राचीन मल्लेपल्ली, हैदराबाद.



पृष्ठ–२००

मूल्य–३)५०

भूल सुधार इस प्रकार करके इस पृष्ठ को निकाल दीजिये ।

पृ. २० की धारा १६ में असली "रस्सी" ही है प्रमाण नकली का ।।

पृ. ३६ की धारा १७ में कुछ पीते इनमें मद्य निरे "कामी" हैं ।।

पृ. ३८ की धारा २४ में अपशब्द "बोलिये आप न अपने स्वर से" ।।

पृ. ४० की धारा २० में जीव स्वरूप से चेतन है पर चेतनता का "भान" तभी होता है ईश्वर द्वारा शरीर मिलता है ।

पृ. ४३ की धारा २१ में "फिर जन्म मृत्यु से रहित न रह" पाएगा ।।

पृ. ६१ की धारा १६ में उसका समझो यह सद् व्यवहार नहीं "है" ।

पृ. ७९ की धारा ८ में साथ ही "फेर" भी पाप किये जाते हैं ।।

पृ. १०१ की धारा २३ में श्यामा के "फटिंग" करवाती है ।